कुरुक्षेत्र

मूल्य : सात रुपये
ग्रामीण विकास को समर्पित
अप्रैल 2001

मध्य प्रदेश में ग्राम स्वराज व्यवस्थाः एक अभिनव पहल

o

वर्ष 2001-2002 का बजट और ग्रामीण विकास

o

गुजरात में भूकम्प के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में पुनर्वास अभियान

बजट में ग्रामीण विकास

इस वर्ष 28 फरवरी को वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा द्वारा वर्ष 2001–2002 के बजट में देश के आर्थिक विकास के लिए कृषि और ग्रामीण विकास को काफी महत्व दिया गया है। वित्त मंत्री ने गांवों में सड़कों के विकास, बिजली की वितरण व्यवस्था में सुधार, कृषि क्षेत्र को वित्त साधन उपलब्ध कराने, किसान क्रेडिट योजना का दायरा बढ़ाने जैसे अनेक प्रस्ताव संसद में पेश किए है। बजट में कृषि और ग्रामीण विकास के लिए प्रस्तावित कुछ उपाय इस प्रकार हैं :

- नाबार्ड की ग्रामीण आधारभूत सुविधा विकास निधि (आई.आर.डी.एफ.) को 45 अरब रुपये बढ़ाकर 50 अरब रुपये कर दिया गया है।
- प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अंतर्गत 2,500 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। ग्रामीण सड़कों के विकास के लिए डीजल–उपकर का 50 प्रतिशत निर्धारित किया गया है।
- 80 हजार ऐसे गांवों का, जहां अभी तक बिजली नहीं है, अगले 6 वर्षों में विद्युतीकरण किया जाएगा। दलित बस्तियों, जनजातीय और समाज के कमजोर वर्गों के घरों में शीघ्र विद्युतीकरण के लिए राज्य विद्युत बोर्डों को ग्रामीण विद्युतीकरण निगम (आर.ई.सी.) से ऋण सहायता बढ़ाई जाएगी।
- आगामी वर्ष में किसान क्रेडिट कार्ड स्कीम का दायरा बढ़ाकर अगले तीन वर्षों में सभी योग्य किसानों को इसके दायरे में लाया जाएगा। इस समय 1.1 करोड़ किसानों को क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। क्रेडिट कार्ड धारक किसानों को बीमा सुविधा भी उपलब्ध कराने का प्रस्ताव है।
- गरीब ग्रामीणों के लिए स्व–रोजगार कार्यक्रमों की बहुलता के स्थान पर "स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना" नाम से एकल कार्यक्रम चलाया जाएगा जिसमें ग्राम पंचायतों की और अधिक भागीदारी होगी। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के तहत पांच अरब रुपये का प्रावधान किया गया है। सुनिश्चित रोजगार योजना के तहत 16 अरब रुपये रखे गए हैं।
- ग्रामीण आवास योजना के तहत 9.84 लाख मकानों के निर्माण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 15.27 अरब रुपये का प्रावधान किया गया है।
- वर्ष 2001–02 के दौरान एक लाख अतिरिक्त स्व–सहायता समूहों को नाबार्ड से जोड़ने का प्रयास किया जाएगा। नाबार्ड और भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा मिलकर 40 करोड़ रुपये के अंशदान से नाबार्ड में एक लघु वित्त विकास निधि की स्थापना की जाएगी।
- सामाजिक सुरक्षा की दो नई योजनाओं की घोषणा की गई है। पहली भूमिहीन कृषि मजदूरों के लिए खेतिहर मजदूर योजना और दूसरी गरीबी रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले माता–पिता के बच्चों के लिए शिक्षा योजना है।
- सब्सिडी युक्त खाद्यान्न प्रदान करने के बजाय राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी ताकि वह सब्सिडी वाली दरों पर गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों के लिए खाद्यान्नों की उगाही एवं उसका वितरण कर सकें।
- ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि कारोबार केन्द्र खोलने की एक नई योजना जिसके तहत मिट्टी के परीक्षण और खेती से संबंधित सलाहकार सेवाएं किसानों को उपलब्ध कराई जाएगी। इसके लिए कृषि विज्ञान के बेरोजगार स्नातकों को आसान शर्तों में ऋण दिया जाएगा।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय
की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 46   अंक 6

चैत्र–बैसाख 1923

अप्रैल 2001

संपादक
बलदेव सिंह मदान

सह–संपादक
रवि सपरा

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पता
संपादक, 'कुरुक्षेत्र',
ग्रामीण विकास मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली–110001
दूरभाष : 3015014
फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
पी.सी. आहूजा

आवरण सज्जा
मोनिका

फोटो साभार :
मीडिया डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

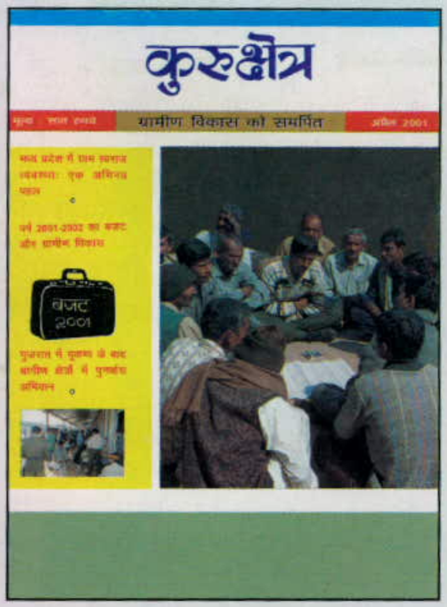

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक–4, लेवल–7, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित होने वाली इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

इस अंक में

- मध्य प्रदेश में ग्राम–स्वराज व्यवस्था : एक अभिनव पहल — डा. बालमुकुन्द बघेल 3
- पंचायतें तथा विकेंद्रीकृत नियोजन : अवसर और चुनौतियां — ललित कुमार त्यागी 5
- ग्रामसभाओं का सफर नामा — डा. दौलत राज थानवी 7
- ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रति पंचायत सदस्यों का दृष्टिकोण — डा. रामसिंह बिष्ट 9
- ग्रामीण विकास के नए नजरिये के साथ नया बजट — डा. कैलाश चन्द्र पपनै 12
- वर्ष 2001–2002 के बजट में कृषि और ग्रामीण विकास — राजेन्द्र उपाध्याय 15
- सरसों के फूल (कहानी) — अनिल कुमार चौबे 18
- ग्रामीण विकास हेतु कुशल प्रशिक्षण नीति की आवश्यकता — प्रो. एस.एन. मिश्रा 20
- लक्षित समूहों की भागीदारी व कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर में छिपा है गरीबी उन्मूलन का मूलमंत्र — एच. सिंह 23
- पंचायती राज – महिलाएं कठघरे में — राजन मिश्रा व मंजुला मिश्रा 26
- गुजरात में भूकंप के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में पुनर्वास महाअभियान — शैलेष व्यास 28
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान — इन्दु शेखर व्यास 30
- लघु एवं कुटीर उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मक चिन्ताएं — डा. जयन्ती लाल भण्डारी 33
- भारत में शिशु–मृत्यु–दर : महत्वपूर्ण उपलब्धियां और कुछ चिंताएं — निरंजन कुमार सिंह 37
- सामाजिक न्याय और भूमि सुधार अभियान — डा. विनोद गुप्ता 39
- 21वीं सदी में सहकारी प्रवृत्ति के सामने चुनौती — प्रो. देवेन्द्र पटेल 41
- सफाई कामगारों में मानव संसाधन विकास — आर.डी. गडकर 43
- चाय : क्या कहते हैं आधुनिक शोध? — डा. विजय कुमार उपाध्याय 47

पाठकों के विचार

कुरुक्षेत्र–गांव की गंगा

कुरुक्षेत्र का फरवरी 2001 अंक पढ़ने को मिला। मुख्य पृष्ठ बहुत ही सार्थक और उपयोगी लगा। यदि पत्रिका को 'गांव की गंगा' कहें तो अतिश्योक्ति न होगी। पत्रिका पूरी तरह ग्रामीण ज्योति के समान लगती है। इस बार के अंक में *ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी निवारण के विभिन्न कार्यक्रम तथा उचित ढंग से हो कूड़े करकट का निपटान* दोनों लेख उपयोगी और जानकारी पूर्ण लगे। बहुपयोगी लहसुन पर जानकारी महत्वपूर्ण लगी।

बद्री प्रसाद वर्मा अनजान
गोलाबाजार–273408
गोरखपुर (उ.प्र.)

शोषण से निजात मिलेगी

कुरुक्षेत्र के फरवरी अंक में ग्रामीण जनजीवन की खुशहाली को बढ़ावा देने वाली जानकारी देकर ग्रामीणों में जिंदगी की खुशियों के बारे में एक बार फिर सोचने को विवश किया है। ऐसा नहीं है कि हमारी सरकार खुशहाली के प्रति लापरवाह है। उसका कारण सरकारी योजनाओं की व्यावहारिक जानकारी का तालमेल सही माध्यम से न बिठा पाना है। *ग्रामसभा विकास की जीवित गंगा* लेख ने इसी समस्या पर प्रकाश डालते हुए ग्रामीणों को प्रगति की नई दिशा की ओर सोचने को विवश किया है। साथ ही उन्हें शोषण से निजात दिलाने की कोशिश भी की है। *जुगाड़ : गरीबों का राजा* लेख में भी जुगाड़ जश्न मनाने का साधन होने के साथ गरीब की विवशता को भी दर्शाया गया है। अंक बसंत की तरह सुखद और अनुकरणीय लगा।

छैल बिहारी शर्मा 'इन्द्र'
शिववदन, छाता–281401 उ.प्र.

अपनी त्रुटियों से साक्षात्कार

ग्रामीण विकास मंत्रालय की बहुपयोगी पत्रिका *कुरुक्षेत्र* का जनवरी 2001 अंक पढ़ा। डा. मिश्रा की *जवाहर ग्राम समृद्धि योजना* के एक वर्ष के लेखा–जोखा ने हमारा साक्षात्कार अपनी ही त्रुटियों से करवाया है तो दूसरी तरफ ग्राम की वर्तमान अवस्था ने हमारी व्यवस्था को झकझोर दिया है *ग्रामीण क्षेत्र में पेयजल की समस्या* एवं *बालिका शिक्षा के अभाव* पर लिखे लेखों ने हमें अपनी ही विकट समस्या से अवगत कराया है। *पानी की खेती का महत्व* पर लिखे लेख ने पानी के संचय का लाभ दर्शाया है और इसकी आवश्यकता पर बल दिया है। केंद्र की जनश्री बीमा योजना स्वागत योग्य है परन्तु इसकी सफलता प्रबंधन पर निर्भर रहेगी। अन्य लेख भी ज्ञानवर्द्धक हैं।

विनोद कुमार लाल की कहानी *रामदहिन काका* ने हमारे समक्ष मानवीय रिश्तों को अतुलनीय रूप में दर्शाया है और अशफाकुल्ला का जीवन वृतान्त एवं असम के तेजपुर जिला महिला समिति की सशक्त भूमिका वर्तमान परिवेश में अपने आप में मिसाल हैं।

अंततः *कुरुक्षेत्र* के सफल प्रकाशन हेतु ग्रामीण विकास मंत्रालय को हार्दिक शुभकामनाएं।

सुमित ठाकुर कालेज रोड, पश्चिम पाली, किशनगंज (बिहार) 855107

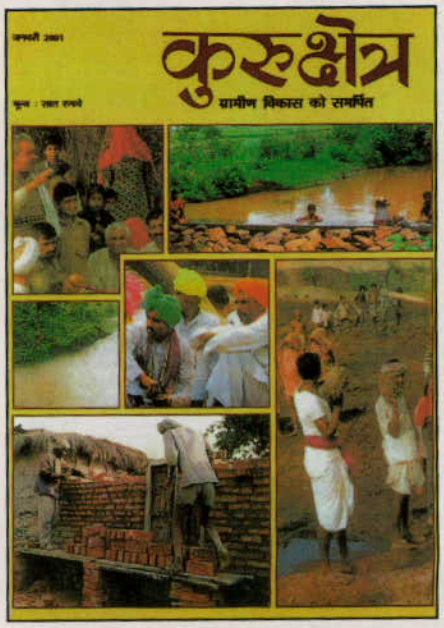

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में जन–सहभागिता

वर्तमान समय में देश में गरीबी उन्मूलन और ग्रामीण विकास के सभी कार्यक्रमों, परियोजनाओं में जन–सहयोग को प्राथमिकता दी जा रही है लेकिन वास्तविक रूप में यह जन–सहयोग चंद स्वार्थी लोगों में सिमटकर रह गया है जिससे ग्रामीण विकास की मूल अवधारणा को क्षति पहुंच रही है। गांव में दो–तीन व्यक्ति ही विकास परियोजनाओं में जन–सहयोग की पूर्ति कर देते हैं। शेष ग्रामीणों को न तो परियोजनाओं की जानकारी होती है, और न जन–सहभागिता के नाम पर गांव में गठित समिति को, ये दो–तीन व्यक्ति ही ग्राम विकास के सभी कार्यों को सम्पन्न कर देते हैं। ग्राम विकास के लिए धन किन परियोजनाओं अथवा संस्था द्वारा प्राप्त हुआ है, किसके द्वारा कितना व्यय हो रहा है। संस्थाएं नमूने के तौर पर एक आध गांव को ही उदाहरण बतौर तैयार कर उसे ही विज्ञापित करती हैं जिससे वित्तीय संस्थाएं भ्रमित हो जाती हैं। ग्राम विकास कार्यों की निष्पक्ष जांच की कोई व्यवस्था नहीं है।

सुनील अनुरागी कांडी, पो.–ढांगर, पौडी गढ़वाल, उत्तरांचल 246221

मध्यप्रदेश में ग्राम-स्वराज व्यवस्था : एक अभिनव पहल

डा. बालमुकुन्द बघेल

भारत गांवों का देश है तथा गांवों के विकास पर ही देश का विकास निर्भर करता है यह बात सर्वथा सत्य है। भारत में अब तक बनी तेरह राष्ट्रीय सरकारों एवं सभी राज्य सरकारों ने हमेशा ही अपनी आर्थिक विकास की योजनाओं में ग्राम–विकास को प्रधानता दी है। स्वतंत्र भारत के 53 वर्ष बीत जाने के बाद तथा योजनाबद्ध विकास के मार्ग में चलते हुए नवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) काल में प्रवेश करने के उपरांत भी ग्रामीण विकास की प्राथमिकताएं उतनी ही प्रासंगिक हैं, जितनी प्रथम पंचवर्षीय योजना के निर्माण के समय थीं।

भारतीय संविधान में उल्लेखित नीति–निर्देशक सिद्धांतों में राज्यों से अपेक्षा की गई है कि वे लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को बढ़ावा देंगे, इसके लिए पंचायती राज संस्थाओं एवं स्थानीय स्वशासन के गठन को प्राथमिकता देंगे। भारत के हृदय प्रदेश में स्थित मध्य प्रदेश वह पहला राज्य है जिसमें 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन में दी गई व्यवस्थाओं को देश में सबसे पहले लागू करके अग्रणी राज्यों में अपना नाम दर्ज करवाया है। राज्य सरकार पंचायती राज तथा स्थानीय संस्थाओं को प्रभावी तथा अधिक अधिकारं संपन्न बनाने के लिए तत्पर दिखाई देती है। पहले जिला सरकार का गठन और अब ग्रामीणों के विकास के लिए 'स्वयं के साधनों से स्वयं के विकास' पर बल देने वाली *ग्राम स्वराज व्यवस्था* का प्रारंभ किया जाना इसका उदाहरण है।

ग्राम स्वराज व्यवस्था

म.प्र. में ग्राम स्वराज की नई व्यवस्था 26 जनवरी 2001 से लागू की गई है। ग्राम स्वराज महात्मा गांधी की परिकल्पना थी। इस कल्पना को उन्होंने सर्वप्रथम 1909 में

प्रकाशित अपनी पुस्तक *हिन्द स्वराज* में स्पष्ट किया था। वे भारत की प्राचीन ग्राम–व्यवस्था को बनाए रखना चाहते थे, जिसमें पंचायतों का महत्वपूर्ण योगदान होता था। गांव अपनी जरूरतों को स्वयं पूरा करने में सक्षम होते थे। गांधीजी का ग्राम–स्वराज ग्रामीण आत्मनिर्भरता पर बल देता है। गांधीजी की इस संकल्पना को मूर्तरूप देने का कदम मध्य प्रदेश सरकार ने उठाया है। इस अवधारणा के अंतर्गत गांवों के विषय में सोचने के तरीके और प्रशासन शैली की बुनियादी मान्यताओं में बदलाव किया गया है। इस व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम सभाओं को अधिक अधिकार सम्पन्न बनाया गया है। अब ग्रामीण क्षेत्रों में विकास गतिविधियों का केंद्र ग्राम सभाएं होंगी। स्थानीय संसाधनों का दोहन उचित और कारगर रूप से हो सके, इसके लिए ग्राम सभाएं योजनाएं बनाएंगी तथा उन्हें स्वीकृत कर उनका कार्यान्वयन भी करेंगी। अब ग्राम विकास से जुड़े सभी मुद्दों पर निर्णय लेने का अधिकार ग्राम सभाओं को होगा।

ग्राम पंचायत ग्राम सभा की एक प्रतिनिधि इकाई है। पंचायती राज अधिनियम में आज भी यह व्यवस्था है कि ग्राम सभा सर्वोपरि है और ग्राम सभा के अधीन ही ग्राम पंचायतों को कार्य करना होता है। ग्राम स्वराज व्यवस्था का बुनियादी उद्देश्य ग्राम सभा को असली सत्ता सौंपना है। ग्राम–स्वराज व्यवस्था पंचायती राज व्यवस्था की पूरक है। इस व्यवस्था के अंतर्गत प्रत्येक गांव में एक ग्राम सभा होगी जिसकी बैठक माह में एक बार अवश्य होनी चाहिए। ग्राम सभा में कोरम की पूर्ति के लिए कुल सदस्यों के कम से कम 20 प्रतिशत सदस्य अनिवार्य रूप से उपस्थित होने चाहिए। कोरम के पूरे न होने पर बैठक सम्पन्न नहीं होगी।

समितियां

गांव की गतिविधियों के संचालन और निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए ग्राम सभा द्वारा आठ स्थायी समितियों का गठन किया जाएगा जिनमें सार्वजनिक सम्पदा, कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, ग्राम विकास, ग्राम रक्षा, अधोसंरचना और सामाजिक न्याय समितियां प्रमुख हैं। यदि आवश्यकता होगी तो ग्राम सभा अन्य समितियां भी गठित कर सकती है। स्थायी समितियों के सदस्यों का कार्यकाल पांच वर्ष का होगा। कोई भी व्यक्ति किसी एक ही समिति का सदस्य बन सकता है। ग्राम सभा के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत संयुक्त वन प्रबंध समिति, वन सुरक्षा समिति, जलग्रहण समिति भी होंगी। इनका गठन भी ग्राम सभा ही करेगी। ग्राम की संपूर्ण योजनाओं को बनाने की जिम्मेदारी ग्राम विकास समिति की होगी। सभी समितियों के अध्यक्ष इस समिति के सदस्य होंगे। ग्राम विकास समिति का अध्यक्ष निर्वाचित सरपंच होगा तथा समिति

इस व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम सभाओं को अधिक अधिकार सम्पन्न बनाया गया है। अब ग्रामीण क्षेत्रों में विकास गतिविधियों का केंद्र ग्राम सभाएं होंगी। स्थानीय संसाधनों का दोहन उचित और कारगर रूप से हो सके, इसके लिए ग्राम सभाएं योजनाएं बनाएंगी तथा उन्हें स्वीकृत कर उनका कार्यान्वयन भी करेंगी। अब ग्राम विकास से जुड़े सभी मुद्दों पर निर्णय लेने का अधिकार ग्राम सभाओं को होगा।

का सचिव ग्राम सभा का सचिव ही होगा। ग्राम विकास समिति के अध्यक्ष को छोड़कर शेष समितियों के अध्यक्षों का निर्वाचन उस, समिति के सदस्यों द्वारा किया जाएगा। विभिन्न समितियों के बीच आपसी समन्वय बना रहे इसके लिए ग्राम पंचायत, ग्राम सभा के मार्गदर्शन में यह सब कार्य देखेगी। ग्राम सभा को यह अधिकार भी है कि वह किसी समिति के सदस्य की सदस्यता उसके कार्यकाल (5 वर्ष) पूर्ण होने से पहले ही समाप्त कर सकती है।

ग्राम स्वराज व्यवस्था को अनुसूचित क्षेत्रों में उस सीमा तक लागू किया गया है जहां तक कि वह पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम 1996 के प्रतिकूल न हो। पंचायत द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों के लिए प्राप्त होने वाली धनराशियों को विभिन्न ग्राम समितियों के मध्य निर्धारित मापदंडों के अनुसार वितरित किया जाएगा। पंचायत क्षेत्र के गांवों के मसलों पर निर्णय के लिए पंचायत क्षेत्र में सभी गांवों की एक संयुक्त ग्राम सभा होगी। ग्राम सभा की अध्यक्षता सरपंच करेंगे। उनकी अनुपस्थिति में उपसरपंच अध्यक्षता करेंगे। इनकी अनुपस्थिति में ग्राम सभा पंचों में से किसी एक व्यक्ति का अध्यक्ष के रूप में चयन करेगी।

ग्राम सभा में लिए जाने वाले निर्णय यथासंभव सर्वसम्मति से लिए जाएंगे। सर्वसम्मति के अभाव में निर्णय आम राय से लिए जा सकते हैं। यदि किसी विषय में सर्वसम्मति नहीं हो पा रही हो, तो उसे अगली बैठक के लिए स्थगित कर दिया जाएगा। इस प्रकार दो बैठकें स्थगित करने के बाद भी यदि सर्वसम्मति या आमराय न बन पा रही हो तो ऐसी स्थिति में निर्णय बहुमत के आधार पर लिया जाएगा। ऐसे निर्णय के लिए गुप्त मतदान की व्यवस्था होगी। शोषित एवं वंचित वर्ग (अनु. जाति, जनजाति) के लिए लागू योजनाओं में लाभार्थियों का चयन करने के लिए इसी वर्ग के लोगों की समितियां बनाई जाएंगी।

ग्राम पंचायत का सचिव ही ग्राम सभा का सचिव होगा। ग्राम सभा को अपने कार्यक्षेत्र में आने वाले शासकीय अधिकारियों और कर्मचारियों पर प्रशासकीय नियंत्रण रखने का अधिकार दिया गया है। राज्य सरकार के कार्यपालिका से संबंधित विभागों के जो कर्मचारी गांव में कार्यरत हैं और जिनका कार्यक्षेत्र ग्राम सभा तक सीमित है वे ग्राम सभा के नियंत्रण में कार्य करेंगे तथा उनकी जवाबदेही भी ग्रामसभा के प्रति होगी। उन कर्मचारियों को वेतन देने, अवकाश स्वीकृत करने, उनके कार्यों का निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण तथा कर्मचारियों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही करने की सिफारिश करने का अधिकार भी ग्राम सभा को होगा। ग्राम सभा द्वारा लिए गए निर्णय के विरुद्ध अपील की व्यवस्था भी है। राज्य सरकार अधिक से अधिक आवर्ती राशि ग्राम सभा को उपलब्ध कराएगी। भू–राजस्व तथा अधिभार से प्राप्त राशि को ग्राम सभा

(शेष पृष्ठ 22 पर)

पंचायतें तथा विकेंद्रीकृत नियोजन : अवसर और चुनौतियां

ललित कुमार त्यागी*

स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् भारत में भी तीसरी दुनिया के अन्य देशों की तरह योजनाबद्ध विकास की शुरुआत यद्यपि केंद्रीकृत नियोजन के रूप में हुई किंतु नीति–निर्धारकों को शीघ्र ही यह आभास हो गया कि भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में केंद्रीकृत नियोजन द्वारा स्थानीय समस्याओं तथा मुद्दों का समाधान कर पाना संभव नहीं है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन का अध्ययन करने हेतु गठित बलवंतराय मेहता समिति ने यह पाया कि कार्यक्रम को सबसे कम सफलता जनसहभागिता संचारित करने के मामले में ही मिली है। इस कमी को दूर करने के लिए समिति ने त्रि–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू करने की सिफारिश की, जो कि विकास कार्यक्रमों की योजना बनाने तथा क्रियान्वयन को विकेंद्रीकृत करने की बहस का आधार बनी।

प्रयास

इस प्रकार 1959 में पंचायती राज व्यवस्था लागू होने से विकेंद्रीकरण के युग की शुरुआत हुई। किंतु पंचायती राज संस्थाएं कुछ आरम्भिक सफलताओं को छोड़कर कोई विशेष उपलब्धि हासिल नहीं कर सकीं। यद्यपि 1978 में अशोक मेहता समिति की सिफारिशों के बाद पंचायतों के पुनरुत्थान हेतु पुनः प्रयास किए गए किंतु, दो–तीन राज्यों को छोड़कर स्थिति में कोई खास सुधार नहीं हुआ। विकास में पंचायतों की भागीदारी नगण्य रही क्योंकि पंचायतों को सक्रिय और मजबूत बनाने के लिए बुनियादी उपाय नहीं किए गए।

जहां तक नियोजन के विकेंद्रीकरण का सवाल है, इस दिशा में योजना आयोग ने भी समय–समय पर कई महत्वपूर्ण कदम उठाए। आयोग ने 1969 में जिला स्तर पर योजना बनाने के लिए दिशा–निर्देश जारी किए थे। अस्सी के दशक के आरम्भ में योजना आयोग ने दो विशेषज्ञ कार्यदल नियुक्त किए। प्रो. हनुमंतराव की अध्यक्षता में गठित कार्यदल ने जिला स्तर पर नियोजन के विभिन्न पहलुओं का गहराई से अध्ययन किया तथा नियोजन के विकेंद्रीकरण हेतु प्रभावी जिला नियोजन के बारे में विस्तृत रूप से अपनी सिफारिशें प्रस्तुत कीं। प्रो. एम.एल. दन्तवाला की अध्यक्षता में गठित एक अन्य कार्यदल ने खंड स्तर पर नियोजन की संभावनाओं और समस्याओं पर विस्तार से चर्चा की और अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए। ग्रामीण विकास के प्रशासनिक प्रबंधों की समीक्षा के लिए डा. जी.वी.के.राव की अध्यक्षता में गठित समिति ने भी उपर्युक्त दोनों कार्यदलों की सिफारिशों से अपनी सहमति जताई। इस प्रकार अस्सी के दशक में एक बहुस्तरीय नियोजन तंत्र को सक्रिय बनाने के लिए कई प्रयास किए।

सीमित सफलता

इन प्रयासों के बावजूद विकास कार्यक्रमों का नियोजन केंद्र तथा राज्य स्तर तक ही सीमित रहा। जिला स्तर की योजनाएं राज्य स्तर की योजनाओं के जिलावार वितरण से ऊपर नहीं उठ सकीं। अधिकतर राज्यों में अभी भी जिला स्तर पर नियोजन में सक्षम तंत्र विकसित नहीं हो सका है। जिला परिषदों

* वैज्ञानिक, राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, कैनाल रिंग रोड, पो.आ. दिलकुशा, लखनऊ–226002, उ.प्र.

की नियोजन में भूमिका प्रभावहीन रही है। विकास खंड स्तर अथवा ग्राम पंचायत स्तर पर तो नियोजन की क्षमता नगण्य ही है।

नया अवसर

अब 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को नियोजन का केंद्र बनाकर नियोजन तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन के विकेंद्रीकरण का पुनः प्रयास किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 293–जी के अंतर्गत पंचायतों को आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजना बनाने तथा इन विषयों से जुड़े कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करने का अधिकार दिया गया है। संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में 29 विषय सम्मिलित किए गए जो धीरे–धीरे राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को हस्तांतरित किए जाने हैं। नवीं पंचवर्षीय योजना ने भी जन–सहभागी संस्थाओं को बढ़ावा देना अपना एक उद्देश्य निर्धारित किया है और इसके लिए अनेक कदम उठाने की आवश्यकता पर बल दिया है। इन प्रयासों से यह आशा जगी है कि पंचायती राज संस्थाएं विकेंद्रीकृत नियोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगी।

चुनौतियां

आशा के इस माहौल में हमें यह ध्यान देना होगा कि केंद्रीय स्तर पर किए गए उपर्युक्त प्रयास ही काफी नहीं हैं। इसका प्रमाण है कि नया अधिनियम लागू होने के छः वर्ष बाद भी, केरल तथा पं. बंगाल को छोड़कर, पंचायतें नियोजन में कोई प्रभावी भूमिका नहीं निभा रही हैं। यद्यपि यहां पर यह मानना पड़ेगा कि वर्षों तक निष्क्रिय रहने वाली पंचायती राज संस्थाओं को शीघ्र ही प्रभावी बनाना कठिन कार्य है। ग्रामीण क्षेत्रों की जटिल सामाजिक–राजनैतिक संरचना के मद्देनजर इस प्रक्रिया में समय लगना स्वाभाविक है। फिर भी यह एक निर्विवाद तथ्य है कि अधिकांश राज्य सरकारों ने अभी तक इस दिशा में प्रभावी कदम उठाने की बजाय पैबन्द लगाने का ही कार्य किया है। इक्कीसवीं सदी में विकास के लक्ष्य इतने जटिल हैं कि स्थानीय संस्थाओं की उपेक्षा घातक सिद्ध हो सकती है। अतः राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं को विकेंद्रीकृत नियोजन का आधार बनाने हेतु निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है :

- राज्य सरकारों को सामाजिक वैज्ञानिकों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर राज्य की ग्रामीण सामाजिक, राजनैतिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए गंभीरतापूर्वक ऐसे तौर–तरीके खोजने होंगे जिनसे नियोजन की कार्यप्रणाली में लचीलापन आए। यह मुद्दा संस्थागत तथा प्रशासनिक परिवर्तन का है क्योंकि कार्य करने के तौर–तरीकों और नियमों में संकीर्णता के रहते पंचायतों का प्रभावी बन पाना संभव नहीं है। यह एक कठिन कार्य है। इसके लिए राज्य सरकारों तथा राजनीतिज्ञों को दलगत राजनीति से ऊपर उठकर प्रतिबद्धता दिखानी होगी और इसे एक जन आंदोलन बनाने हेतु अपना समर्थन तथा सहयोग देना होगा।

नवीं पंचवर्षीय योजना ने भी जन–सहभागी संस्थाओं को बढ़ावा देना अपना एक उद्देश्य निर्धारित किया है और इसके लिए अनेक कदम उठाने की आवश्यकता पर बल दिया है। इन प्रयासों से यह आशा जगी है कि पंचायत संस्थाएं विकेंद्रीकृत नियोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगी।

- पंचायतों को वित्तीय संसाधन मुहैया कराने की प्रक्रिया को भी संस्थागत रूप देना होगा। इसके लिए समुचित वैधानिक प्रावधान करने होंगे। राज्य के विकास सम्बंधी बजट का एक निश्चित भाग पंचायतों द्वारा बनाई गई योजनाओं के लिए सुनिश्चित करना होगा; ताकि पंचायतों में यह विश्वास जगे कि उनके द्वारा किए गए प्रयास सार्थक होंगे और उनकी योजनाओं पर अमल संभव होगा।
- पंचायतों के माध्यम से नियोजन को प्रभावी बनाने के लिए, जैसा कि केरल के उदाहरण से समझा जा सकता है, इस प्रक्रिया में केवल पंचायत प्रतिनिधि ही नहीं बल्कि सभी ग्रामीण लोगों की भागीदारी आवश्यक है। अतः ऐसे रचनात्मक उपाय सोचने होंगे ताकि ग्रामीण जनमानस की सामूहिक शक्ति को इस आंदोलन के लिए संचारित किया जा सके। नियोजन की इस प्रक्रिया का यह सबसे जटिल किंतु महत्वपूर्ण कार्य है। इसके लिए सामाजिक कार्यकर्ताओं, स्थानीय स्वंयसेवी संस्थाओं तथा गांव के पढ़े–लिखे लोगों की सहायता लेनी होगी।
- योजना बनाना एक तकनीकी विषय है जिसके लिए कुछ न्यूनतम दक्षता की आवश्यकता होती है। अतः पंचायत प्रतिनिधि तथा स्वयंसेवी संस्थाओं को नियोजन के विभिन्न पहलुओं से सम्बंधित जानकारी देने के लिए चरणबद्ध तरीके से प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी होगी। वर्तमान में पंचायत प्रतिनिधियों को जो प्रशिक्षण दिया गया है वह पर्याप्त नहीं है। इस कार्य में स्थानीय कृषि विद्यालयों/विश्वविद्यालयों, विभिन्न प्रसार तथा विकास प्रशिक्षण केंद्रों, स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संस्थाओं की मदद ली जा सकती है।

निष्कर्ष

भारत में नियोजन को विकेंद्रीकृत करने के लिए काफी प्रयास किए गए किंतु नियोजन की प्रक्रिया निचले स्तरों तक नहीं पहुंच सकी। अब 73वें संविधान संसोधन अधिनियम के माध्यम से पंचायतों को विकेंद्रीकृत नियोजन का आधार बनाने का महत्वपूर्ण प्रयास किया जा रहा है। यह एक स्वागतयोग्य अवसर है किंतु इस अवसर को उपलब्धि में बदलने के लिए बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। ❑

राजस्थान में पंचायती राज का एक वर्ष

ग्रामसभाओं का सफरनामा

डा. दौलत राज थानवी

पंचायती राज का नवस्वरूप 73वें संवैधानिक संशोधन से 1995 में हुए पहले चुनावों से उभर कर सामने आया। यह स्वरूप एक नवीन शक्ति का शंखनाद करने वाला प्रतीत हुआ क्योंकि ग्राम सभाओं को संवैधानिक दर्जा दिया गया। 1995 से 1999 तक ग्राम सभाओं की बैठकों का प्रयोजन गरीबी की रेखा से नीचे जीवन जीने वाले लोगों की सूची तक ही सीमित रहा। इस बीच मई 1999 में राजीव गांधी प्राथमिक पाठशालाओं के निर्माण और उनमें शिक्षा सहयोगी नियुक्त करने के लिए ग्राम सभाओं से व्यवस्था करने को कहा गया। इनमें एक विशेषता जरूर थी कि सरकार की ओर से प्रत्येक ग्राम सभा में अपने प्रतिनिधि प्रबोधन

लोगों की उपस्थिति की ग्राम सभा को सशक्त बनाती है

के लिए भेजे गए। *कुरुक्षेत्र* के अक्तूबर 1999 के ग्रामसभा के विशेष अंक में जाने–माने सामाजिक वैज्ञानिकों के लिखे लेखों से भी सहज अनुमान लगाया जा सका कि सरकार के प्रबंधों के बावजूद ग्रामीण जनता का विशेष उत्साह इन ग्राम सभाओं में नहीं था।

जनवरी 2000 में द्वितीय पंचायती राज संस्थाओं के चुनावों से ऐसा प्रतीत होने लगा कि 60 प्रतिशत ग्रामीण जनों ने पंच, सरपंच और पंचायत समिति व जिला परिषदों के सदस्यों के चयन में मतदान करके अपना उत्साह दिखाया है तो ग्राम सभाओं में भी वे अधिक उत्प्रेरित होंगे। चुनावों के दौरान मतदाताओं के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए जिन ग्रामीण क्षेत्रों का दौरा किया गया तो पता चला कि पंच, सरपंच व पंचायत समिति के सदस्य के चुनावों में उम्मीदवारों ने मतदाओं को समूहीकृत करने के लिए भोजन कराना व मादक द्रव्यों का सेवन कराने की बाड़ा संस्कृति का प्रयोग किया, उनको एक स्थान पर एकत्रित करने के लिए सवारी गाड़ी का प्रयोग भी किया गया। (*कुरुक्षेत्र* मई, 2000)। यही कारण था कि महिला मतदाताओं का मतदान प्रतिशत 66–70 रहा। चुनावों के बाद इन मतदाताओं को न तो पंचों व सरपंचों से लेन–देन रहा और न ही पंचायत समिति के सदस्यों से। मतदाताओं ने ग्रामीण विकास के क्षेत्र में ग्रामसभाओं के महत्व की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया और उन्हें महज बातें करने वाली संस्था माना।

मतदाताओं की विरक्ति व उदासीनता का अध्ययन करने के लिए मई, अगस्त व अक्तूबर की ग्राम सभाओं और मई 2000 की वार्ड सभाओं में जन भागीदारी को आधार बनाया गया। मई 2000 की वार्ड सभाएं एक से पन्द्रह दिनों में सम्पन्न हो सकीं। इस तरह की सभाओं में पंचों ने सभापतित्व किया और स्थानीय अध्यापकों व कर्मचारियों को सरकारी प्रतिनिधि बनाया गया। इस कारण कहीं भी ऐसी रिपोर्ट नहीं मिली कि वार्ड सभाएं स्थगित हो गई हों या कोरम पूरा नहीं हुआ हो या कोई अप्रिय घटना घटित हुई हो। प्रगतिपूर्वक ढंग से ग्रामीणों ने भाग लिया और विकास की संभावना से शिक्षा, स्वास्थ्य, गंदे पानी की निकासी, यातायात व सामाजिक कुरीतियों और आपराधिक प्रवृत्तियों पर कारगर सुझाव भी दिए। अगस्त 2000 के *कुरुक्षेत्र* अंक में इनकी विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिससे यह स्वीकारा जा सकता है कि सूक्ष्म स्तर की सभाएं वास्तव में प्राचीन यूनानी गणराज्यों की तरह प्रत्यक्ष में भारत में भी दिख सकती हैं।

मई 2000 की ग्राम सभाओं को माह के उत्तरार्द्ध में पूरा किया गया। 15 मई को सभी स्तर पर एक ही दिन में ग्राम सभाएं होनी थीं परन्तु कहीं कोरम पूरा नहीं तो कहीं पंचायत सचिव ने ताला नहीं खोला, कहीं पर पत्थर बाजी हो गई, कहीं–कहीं लोगों को सूचित नहीं किया जा सका। इस तरह मई माह पूरा ही व्यतीत हो गया। आखिर किसी तरह ग्राम सभाएं हो गईं। इनमें उपस्थिति की दृष्टि से जनता का उतना उत्साह नहीं था जितना ग्राम की वार्ड सभाओं में दिखाई दिया था। इन ग्राम सभाओं में ज्यादातर विकास योजनाओं के अतिरिक्त जनता का रोष इस बात पर था कि जनवरी 2000 में पंचायतों को 29 विभागों पर नियंत्रण दिया गया है और ग्राम पंचायत क्षेत्र में कार्यरत सभी अधिकारी व कर्मचारी पंचायतों के अधीन हैं परन्तु वे सरपंच व पंच की बात ही नहीं सुनते और ग्राम सभाओं में उनकी उपस्थिति नहीं के बराबर थी। पटवारी, अध्यापक, चिकित्सा और अन्य विभागों में पदस्थ कर्मचारी इन सभाओं में शायद ही दृष्टिगत हुए। ग्राम सभाओं में महिलाओं की सहभागिता तो बहुत कम थी ही, महिला पंच–सरपंच भी कहीं–कहीं पर नदारद रहीं। उनके पति (पंच पति व सरपंच पति) ही सक्रिय रहे। मई 2000 की ग्राम सभाएं कुल मिलाकर जन सहभागिता की दृष्टि से कुछ–कुछ सफल रहीं क्योंकि ठोस प्रस्ताव पारित किए गए और उनको आगे समिति व जिला स्तर पर भेजने का प्रयास किया गया। शायद यही सोचा गया कि सरकार अधिक वित्तीय अधिकारों की सत्ता हस्तान्तरण करने की हल्ला होड़ मचा रही है वो हकीकत में पूरा होगा (राजस्थान पत्रिका व दैनिक भास्कर में इस तरह की रिपोर्टें प्रकाशित हुई हैं)।

अगस्त 2000 में 15 तारीख स्वाधीनता दिवस और रक्षा बंधन के दिन पूरे प्रदेश में एक ही दिन ग्राम सभाओं का आयोजन हुआ। इन ग्राम सभाओं में महिलाओं की सहभागिता शून्य से एक प्रतिशत रही और 90 प्रतिशत ग्राम सभाओं में कोरम पूरा नहीं हुआ तथा गैर जन प्रतिनिधि वहां पर कुर्सी पर बैठकर हुक्का पानी पीकर चले गए। विभिन्न स्थानों के साथ जयपुर जिले की चार ग्राम पंचायतों की रिपोर्टों से यह बात सिद्ध होती है कि ग्रामवासियों में मई 2000 के मुकाबले अधिक उत्साह नहीं था।

2 अक्तूबर 2000 में नवरात्रि और गांधी जयन्ती के अवसर पर भी ग्राम सभाएं आयोजित हुईं जिनमें भी जन उत्साह बहुत ही कम था। वहां महिलाएं तो कम आईं ही, पुरुषों की भी संख्या कम थी।

कहीं पंचायत भवन ही नहीं खुला, कहीं सचिव उपस्थित नहीं था, कहीं पर लोग कार्यवाही रजिस्टर में खाना–पूर्ति स्वयं ही करने लगे और गरीबी की रेखा के नीचे वाली सूचियों में अपना नाम लिखवाकर सरकारी लाभ लेने को उत्साहित रहे। महिलाओं ने तो स्पष्ट कहा कि नवरात्रि पूजन से शक्ति मिलेगी यहां ग्रामसभा में आकर टाइम खराब करने से क्या फायदा?

इस तरह 2000 वर्ष की ग्राम सभाओं में कोई ऐसा ठोस कार्य नहीं हो सका जो संवैधानिक आकांक्षाओं के अनुरूप हो। यही दौर रहा तो ग्राम सभाओं का संवैधानिक स्वरूप मात्र छलावा ही सिद्ध होगा। एक ग्राम पंचायत ने तो सूचना नहीं देने का प्रस्ताव भी पारित करके सूचना के अधिकार की भी समाप्त कर दिया।

ग्राम सभाओं में सरपंच के साथ दुर्व्यवहार तो आम बात है परन्तु नवम्बर 2000 में एक पंचायत समिति के प्रधान पर विधायक के व्यक्तियों ने हमला बोल कर पंचायत समिति कार्यालय में प्रवेश किया। विधायक पंचायत की जीप लेना चाहता था। विधान सभा में इस तथ्य पर हंगामा भी हुआ जो यह सिद्ध कर रहा था कि पंचायती राज संस्थाओं को वास्तव में व्यापक शक्तियां नहीं दी गई हैं केवल घोषणाएं ही होती रही हैं। ❑

ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रति पंचायत सदस्यों का दृष्टिकोण

डा. रामसिंह बिष्ट*

स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण विकास, भारत सरकार के प्रमुख लक्ष्यों में रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात् इस ओर अत्यधिक प्रयत्न विभिन्न सरकारों द्वारा किए गए जिनमें 1952 का सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रथम प्रयास था। लेकिन यह कार्यक्रम अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सका। इस कार्यक्रम की असफलताओं के कारणों को उजागर करते हुए बलवन्त राय मेहता समिति ने स्पष्टतः कहा था कि स्थानीय लोगों की असहभागिता इस कार्यक्रम की असफलता का मुख्य कारण था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार द्वारा, स्थानीय लोगों की विकास में सहभागिता को सुनिश्चत करने के लिए नए–नए प्रयत्न किए गए। नई समितियों को समय–समय पर ग्रामीण विकास और पंचायती राज की व्यवस्था की स्थापना करने से सम्बंधित रूपरेखा बनाने का दायित्व सौंपा गया, जिनमें बलवन्त राय मेहता समिति के पश्चात् अशोक मेहता समिति; जी.के.वी. राव समिति तथा लक्ष्मीमल सिंघवी समिति प्रमुख हैं। इन समितियों में से कुछ ने द्विस्तरीय तथा कुछ ने त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने के साथ–साथ कई अन्य तरह की सिफारिशें कीं। वस्तुतः 1950 से 1993 तक देश के राज्यों में पंचायती राज व्यवस्था अलग–अलग स्वरूपों में सफलताओं और असफलताओं के बीच बनी रही। इस समय के अनुभवों और ग्रामीण वास्तविकताओं पर विभिन्न समितियों, वर्कशापों, सम्मेलनों में व्यक्त किए गए विचारों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने संविधान में एक व्यापक संशोधन करने का निर्णय लिया जिससे पंचायती राज की बुनियादी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विकास को गति दी जा सके, तथा पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिकता प्रदान की जा सके। नब्बे के दशक में, भारत सरकार ने सभी राज्यों में एक समान पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने, ग्रामीण विकास प्रकिया में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने तथा सत्ता के विकेंद्रीकरण की परिकल्पना को साकार करने के उद्देश्य से अत्यधिक प्रयास किए तथा इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संविधान संशोधन विधेयक को 73वें संविधान अधिनियम में परिणत करके 24 अप्रैल, 1993 को संपूर्ण देश में लागू कर दिया।

बच्चों की शिक्षा को लेकर अभिभावक अवश्य चिंतित दिखते हैं और सभी ग्राम पंचायत सदस्यों का मानना है कि बच्चों के लिए शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था होनी चाहिए, चाहे लड़का हो या लड़की।

उल्लेखनीय है कि स्थानीय शासन विषय राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आता है। अतः केंद्र ने इस संशोधन अधिनियम के द्वारा मात्र एक दिशानिर्देश के रूप में राज्यों से विधि बनाकर पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना की सिफारिश की थी। राज्यों ने इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार अपने–अपने क्षेत्रों में त्रिस्तरीय और द्विस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की स्थापना की। इस व्यवस्था में सबसे महत्त्वपूर्ण प्रावधान यह है कि पंचायती राज संस्थाओं को 29 विषयों में शक्ति–संपन्न बनाया गया। यह बात अलग है कि अलग–अलग राज्यों में पंचायतों को अलग–अलग शक्तियां दी गईं। इस अधिनियम के तहत स्थापित पंचायती राज व्यवस्था और इस व्यवस्था के तहत चलाए गए विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के संदर्भ में लेखक द्वारा ग्राम स्तर पर स्थापित ग्राम पंचायत के सदस्यों का ग्रामीण विकास में उनकी भागीदारी और ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रति उनके दृष्टिकोण को जानने का प्रयास किया गया। मुख्य रूप से दो बिंदुओं पर उनका दृष्टिकोण जानने का प्रयास किया गया। प्रथम, उनकी दृष्टि में ग्रामीण विकास योजनाओं का महत्व और द्वितीय, व्यवहार में जब ग्रामीण विकास योजनाएं कार्यान्वित की जाती हैं तो पंचायत सदस्यों के समक्ष आने वाली समस्याओं के प्रति सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों के सहयोग को जानने का प्रयास। वर्तमान अध्ययन में उत्तरांचल राज्य के जनपद चमोली के 10 गांवों के कुल 50 ग्राम पंचायत सदस्यों और प्रधानों का चयन, दैव निदर्शन द्वारा किया गया है तथा उनके अभिमत को साक्षात्कार अनुसूची द्वारा संकलित किया गया। प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से निश्चित ही चौंकाने वाले परिणाम सामने आते हैं। इन परिणामों से कोई भी व्यक्ति यह सोचने के लिए विवश होता है कि पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकास के उद्देश्यों को प्राप्त करना अभी भी एक दुष्कर कार्य है। निश्चित रूप से ग्रामीण विकास योजनाएं सैद्धांतिक दृष्टि से अच्छी और फलमूलक लगती हैं, लेकिन इन

* अंशकालिक प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय परिसर : श्रीनगर (गढ़वाल)

योजनाओं में व्यावहारिक सच्चाई को अभी भी नजरअंदाज कर दिया जाता है जिस कारण पंचायती संस्थाएं ग्रामीण विकास के प्रति उदासीन बनी हुई हैं।

लेखक द्वारा ग्राम पंचायतों के समक्ष कुछ प्रश्न रखे गए जो कि ग्राम पंचायत के सदस्यों की दृष्टि में ग्रामीण योजनाओं के मूल्यांकन से संबंधित थे। उच्च स्तर पर ग्रामीण विकास के विषय में आंकड़े जो भी बताते हैं, वह अनिवार्यतः सत्य नहीं होते। वस्तुतः यथार्थ जानने के लिए पंचायत सदस्यों से ग्रामीण विकास की वास्तविक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। सरकार द्वारा चलाई गई ग्रामीण विकास योजनाओं का यथार्थ मूल्यांकन पंचायत सदस्य ही कर सकते हैं। एक प्रश्न यह रखा गया कि ग्रामीण विकास कार्यक्रम आपकी दृष्टि में कितने सफल हुए हैं तथा इनके द्वारा आपके गांव की आर्थिक स्थिति में कितना सुधार हुआ है? इस प्रश्न के उत्तर में 70 प्रतिशत उत्तरदाता मानते हैं कि ये बिलकुल भी सफल नहीं हुए हैं और इनका ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को सुधारने में कोई योगदान नहीं है। मात्र 30 प्रतिशत उत्तरदाता ही स्वीकार करते हैं कि ये साधारण रूप से सफल रहे हैं तथा आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ता प्रदान हुई है। शिक्षा के प्रसार को लेकर चलाई जा रही योजनाओं के संबन्ध में ग्राम पंचायत के सदस्यों का एक मत है कि प्रौढ़ शिक्षा या अनौपचारिक शिक्षा जैसे कार्यक्रम बिलकुल असफल हैं, क्योंकि ग्रामीणों को अपने घर के कार्यों और खेत के कार्यों से ही समय नहीं मिल पाता है। उनका यह भी कहना है कि शिक्षा हमारा पेट नहीं भर सकती है, बिना शिक्षा के हम जी सकते हैं लेकिन बिना भोजन के जीवित नहीं रह सकते हैं। बच्चों की शिक्षा को लेकर अभिभावक अवश्य चिंतित दिखते हैं और सभी ग्राम पंचायत सदस्यों का मानना है कि बच्चों के लिए शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था होनी चाहिए, चाहे लड़का हो या लड़की। लेकिन वर्तमान में जिस व्यवस्था के अंतर्गत शिक्षा चलाई जा रही है, उसे सभी सदस्य स्वीकार नहीं करते हैं तथा शिक्षा के निम्न स्तर के लिए भवन का अभाव, शिक्षक का अभाव, पठन–पाठन सामग्री की कमी तथा ग्रामीण शिक्षा के प्रति सरकारी उपेक्षा को जिम्मेदार मानते हैं।

सैद्धांतिक रूप से यह व्यवस्था की गई है कि ग्रामीण विकास में पंचायत संगठनों की महत्वपूर्ण भागीदारी हो। अधिक से अधिक ग्रामीण विकास के कार्य इन्हीं संगठनों को सौंपे गए हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि कोई भी संगठन या उसके सदस्य तभी किसी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकते हैं जबकि वे योग्य हों और साथ ही उनको संपूर्ण जानकारी हो। उनके साथ प्रशासन का सहयोग रचनात्मक हो। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत तथा प्रशासनिक अधिकारियों और कर्मचारियों द्वारा ही ग्रामीण योजनाओं को कार्य रूप दिया जाता है तथा समय–समय पर विकासखण्ड अधिकारियों तथा कर्मचारियों द्वारा ग्राम पंचायत द्वारा किए गए कार्यों की प्रगति और विकास के सभी क्षेत्रों में प्रतिवेदन तैयार किया जाता है। इस व्यवस्था से यह स्पष्ट है कि ग्राम पंचायत और सरकारी तंत्र में संतुलन स्थापित किया गया है, जिससे न तो ग्राम पंचायत निरंकुश हो सके और न ही सरकारी कर्मचारियों की लालफीताशाही चले। व्यवहार में यह व्यवस्था सफल नहीं हो पाई है। वस्तुतः पंचायत सदस्य तथा सरकारी कर्मचारी एक दूसरे के सहायक न रहकर प्रतिस्पर्धी बन जाते हैं। सरकारी कर्मचारी अपनी विशेषज्ञता के आधार पर निर्वाचित जन प्रतिनिधियों पर अपना प्रभाव स्थापित करने में सफल रहते हैं तथा पंचायत सदस्य अनुभव की कमी, अशिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण अधिकारियों तथा कर्मचारियों के हाथ की कठपुतली बन कर रह जाते हैं। परिणामतः प्रशासनिक कर्मचारियों और पंचायत सदस्यों के मध्य विरोधाभास बना रहता है, जिससे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का लाभ, लक्षित वर्ग नहीं उठा पाता है और कार्यक्रमों का उद्देश्य अपूर्ण रह जाता है।

व्यवस्था का यह एक दुर्भाग्यपूर्ण पहलू रहा है कि इसमें नौकरशाही का बोलबाला अत्यधिक दिखाई देता है और पंचायती राज व्यवस्था भी इसका अपवाद नहीं है। ग्राम स्तर के पंचायत सदस्यों को कार्यक्रम तथा अन्य सामग्री के लिए विकासखण्ड कार्यालय के सरकारी कर्मचारियों तथा उच्च स्तरीय सरकारी अधिकारियों पर निर्भर रहने से उनकी अधिकतम क्षमता खत्म हो जाती है। पंचायत सदस्यों को औपचारिकताएं पूरी करने में ही अत्यधिक समय लग जाता है। धन, श्रम और मानसिक क्षमता का व्यापक अपव्यय होता है। इस सबके परिणामस्वरूप पंचायत सदस्यों का ग्रामीण विकास के प्रति उदासीन हो जाना तथा विकास कार्यक्रमों के लक्ष्य वर्ग का, लाभों से वंचित रह जाना स्वाभाविक हो जाता है। विकास कार्यक्रमों के बारे में जानने के इच्छुक सदस्य जब कर्मचारियों से जानना चाहते हैं तो 38 प्रतिशत सदस्यों का मानना है कि अधिकारियों और कर्मचारियों का सामान्य सहयोग रहता है। 62 प्रतिशत सदस्यों का मानना है कि न्यून सहयोग रहता है तथा कोई भी सदस्य यह मानने के लिए तैयार नहीं है कि अधिकारी विकास कार्यक्रमों के बारे में पूछने पर सदैव सहयोग करते हैं। यह सर्वविदित तथ्य है कि सरकार द्वारा समय–समय पर विभिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं को प्रारम्भ किया जाता रहा है और इन योजनाओं से संबन्धित विस्तृत जानकारी विकासखण्ड कार्यालयों में अन्तिम रूप में पहुंचती है। अधिकारियों और कर्मचारियों का यह दायित्व बन जाता है कि इनकी जानकारी प्रत्येक ग्राम पंचायत को पहुंचाएं तथा जो भी मापदण्ड और प्रावधान नई योजना के बारे में हों उनके बारे में स्पष्टतया बताएं। लेकिन कर्मचारियों द्वारा सहयोग न करके अपनी सुविधाओं के अनुसार यह कार्य किया जाता है जो कि दुर्भाग्यपूर्ण है। वर्तमान अध्ययन के अंतर्गत पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में 70 प्रतिशत पंचायत सदस्यों का मानना है कि हमारे सुझावों पर प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा कभी भी ध्यान नहीं दिया जाता है तथा 30 प्रतिशत लोग मानते हैं कि कभी–कभी ही ध्यान दिया जाता है। इसी प्रकार एक प्रश्न के प्रत्युत्तर में 86 प्रतिशत पंचायत सदस्य मानते हैं कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से लाभ उठाने में जिस प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है वह अत्यधिक कठिन है और 14 प्रतिशत सदस्य इस प्रक्रिया को साधारण मानते हैं परंतु कोई भी ऐसा सदस्य नहीं है जो इस प्रक्रिया को स्वाभाविक मानता हो। स्पष्टतः पंचायत सदस्यों की दृष्टि में प्रक्रियात्मक कठिनाइयों के कारण ग्रामीण विकास कार्यक्रमों

का साकार होना दुष्कर हो जाता है तथा विकास कार्यक्रमों को व्यावहारिक रूप देने में पंचायत सदस्यों का योगदान घट जाता है। पंचायत के सदस्यों को एक चपरासी से लेकर उच्च अधिकारियों तक सभी को संतुष्ट करना पड़ता है। साथ ही अपनी व्यक्तिगत समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जिनमें अनुभवहीनता, अशिक्षा प्रमुख हैं। भ्रष्टाचार के दल–दल में सभी योजनाएं फंस जाती हैं। परिणामतः गांवों की स्थिति में शासकीय विकास के प्रयास समुचित परिवर्तन उत्पन्न करने में असमर्थ रहते हैं तथा सामान्य जन के लिए निर्मित कार्यक्रमों का लाभ एक सीमित वर्ग को ही प्राप्त हो पाता है जो कि सक्षम और जागरूक होता है। वास्तव में ग्रामीण विकास की प्रक्रिया का प्रशासन तंत्र बहुत जटिल है जो ग्रामीण परिवेश में निवास करने वाले आम आदमी के लिए समझना अत्यधिक कठिन है। इन्हीं सब समस्याओं के होने से पंचायत सदस्यों का दृष्टिकोण ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रति नकारात्मक हो जाता है। साथ ही पूरी ग्रामीण जनता भी इनसे अपने को अलग कर लेती है।

वस्तुतः सैद्धांतिक आधार पर बनाई गई ग्रामीण विकास की संकल्पना और योजनाओं का उद्देश्य तभी सफल हो सकता है जबकि व्यावहारिक पहलुओं की ओर भी ध्यान दिया जाए। आज भी अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, अज्ञानता या जागरूकता की कमी को ध्यान में रखकर प्रत्येक योजना का निर्माण करना आवश्यक है। साथ ही वास्तविक पंचायती राज व्यवस्था और ग्रामीण जनता की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए ग्राम पंचायत के सदस्यों को अनिवार्य रूप से वित्त पोषित प्रशिक्षण की अति आवश्यकता है। समय–समय पर दूर–दराज के इलाकों में प्रशासनिक अधिकारियों को शिविर लगाकर पंचायत सदस्यों तथा ग्रामीण जनता को ग्रामीण विकास की संकल्पना और ग्रामीण योजनाओं के महत्त्व को बताया जाना चाहिए। ग्रामीण विकास से जुड़े अधिकारियों और कर्मचारियों की प्रोन्नति तथा पुरस्कार का मापदण्ड, उनके ग्रामीण विकास में भागीदारी को बनाया जाना चाहिए। ग्राम पंचायतों की कार्यप्रणाली, शक्तियां और उनकी भूमिका पर समय–समय पर पत्र–पत्रिकाओं को गांवों तक पहुंचाने का कार्य अधिकारियों को अनिवार्य रूप से सौंपा जाना चाहिए। यदि उपर्युक्त बातों का ध्यान रखा गया तो ग्रामीणों की सहभागिता अवश्य ही बढ़ेगी और ग्रामीण विकास के प्रति उनके दृष्टिकोण को नकारात्मक से सकारात्मक बनाया जा सकता है, जो कि पंचायती राज और ग्रामीण विकास योजनाओं का प्रमुख लक्ष्य रहा है। ❑

कुरुक्षेत्र की विज्ञापन दरें

	सामान्य दर		चार विज्ञापनों की अनुबंध दर		विशेषांक की दरें	
	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम	रंगीन	श्वेत/श्याम
पूरा पृष्ठ	8000	4000	25600	12800	12000	6000
आधा पृष्ठ	5000	2500	16000	8000	7000	4000
पिछला आवरण पृष्ठ	13000	7000	41600	22400	19000	10000
अन्दर का (दूसरा–तीसरा) आवरण पृष्ठ	11000	6000	35200	19200	16000	9000

पत्रिका के आकार संबंधी अन्य जानकारी

पूरा आकार : 21 से.मी. × 28 से.मी.
मुद्रित क्षेत्र : 17 से.मी. × 24 से.मी.
मुद्रण प्रणाली : आफसेट प्रेस
स्वीकार्य विज्ञापन सामग्री : केवल आर्टवर्क/आर्टपुल/पोजिटिव
विज्ञापन स्वीकार करने की अंतिम तिथि : 60 दिन पहले
पता जिस पर विज्ञापन भेजा जाए : विज्ञापन एवं प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
ईस्ट ब्लाक 4, लेवल 7,
आर.के. पुरम, नई दिल्ली 110066
टेलीफोन : 6105590 (कार्यालय)
फैक्स : 6100207

डिमांड ड्राफ्ट निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो
हम विज्ञापन एजेंसियों को 15 प्रतिशत कमीशन देते हैं।
किसी पत्रिका के दो भाषाओं के संस्करणों के एक ही अंक के लिए विज्ञापन जारी करने पर 10 प्रतिशत की छूट दी जाती है।

ग्रामीण विकास के नए नजरिये के साथ नया बजट

डा. कैलाश चन्द्र पपनै

केन्द्र सरकार द्वारा पेश किए जाने वाले वार्षिक बजट में लोगों की मुख्य दिलचस्पी कर प्रस्तावों या उद्योग जगत को प्रोत्साहन देने के लिए किए जाने वाले प्रस्तावों पर केन्द्रित रहती है और बजट के बारे में टिप्पणियां भी इसी दृष्टि से व्यक्त की जाती हैं। इस बार वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा द्वारा 28 फरवरी को पेश किए बजट की एक विशेषता यह है कि इसमें देश के आर्थिक विकास के लिए कृषि और ग्रामीण क्षेत्र को वह महत्व दिया गया है जिसका कि वह सही मायनो में हकदार है। वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा द्वारा पेश किए गए बजट में केन्द्र में सत्तारूढ़ गठबंधन सरकार ने ग्रामीण विकास के बारे में अपनी प्रतिबद्धता को इस बार एक

नए अंदाज में पेश किया। अपने बजट भाषण में कृषि एवं ग्रामीण विकास का उल्लेख करते हुए श्री सिन्हा ने स्वीकार किया कि कृषि क्षेत्र में अब तक किए गए सुधार अपर्याप्त रहे हैं। इसके बाद वित्त मंत्री ने अपनी रणनीति को उजागर किया और कृषि को आर्थिक सुधार प्रक्रिया में समेटते हुए इसके विकास के लिए पर्याप्त ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने, गांवों में सड़कों के विकास और बिजली वितरण व्यवस्था में सुधार के बारे में विस्तृत प्रस्तावों का खुलासा किया। बजट में गांवों को बुनियादी रूप से अधिक प्रभावित करने वाली कृषि के विकास के उपायों पर ध्यान केन्द्रित किया गया है और गांवों में विकास की धारा पहुंचाने वाली सड़कों और औद्योगिक प्रगति की संभावना पैदा करने वाली बिजली की आपूर्ति की तरफ भी विशेष ध्यान दिया गया है। वास्तव में कृषि क्षेत्र में निवेश बढ़ाने की रणनीति के तहत गांवों को सड़क और बिजली सुविधा प्रदान करने के उपायों से गांवों के विकास का मार्ग स्वतः प्रशस्त हो सकता है। कृषि के लिए दुर्भाग्य की बात यही रही है कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया के प्रारम्भ होने के एक दशक बाद भी कृषि क्षेत्र एक तरह से इससे अछूता ही रहा। इसका एक नतीजा यह भी हुआ कि 1980 के दशक के बाद अनाज उत्पादन की विकास दर आधी रह गई। कृषि के विकास के बिना ग्राम विकास के उपायों को वांछित सफलता मिलना भी संदिग्ध हो जाता है।

संसद में प्रस्तुत वर्ष 2001–2002 के बजट में कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को फिर से पटरी पर लाने का प्रयास किया गया है। गत दो वर्षों से एक फीसदी से कम विकास दर को झेल रहे कृषि क्षेत्र को फिर से तेजी से विकास की ओर अग्रसर करने के लिए वित्तीय साधनों की उपलब्धता बढ़ाने के विशेष प्रयास किए गए हैं। चालू दशक में पहली बार कृषि क्षेत्र के हितों पर इतना अधिक ध्यान दिया गया है। कृषि विकास में ऋण प्रवाह के महत्व को स्वीकार करते हुए वित्त मंत्री ने इसमें 24 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य घोषित किया और बताया कि वर्ष 2001–2002 में 64,000 करोड़ रुपये का ऋण कृषि क्षेत्र को उपलब्ध हो सकेगा। उन्होंने बताया कि चालू वर्ष में इसमें 15 प्रतिशत की वृद्धि की आशा है तथा यह लगभग 51,500 करोड़ के स्तर पर रहेगा।

वित्त मंत्री ने ऋण प्रवाह बढ़ाने के उपायों के तहत राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के सहयोग से 1995–96 में स्थापित ग्रामीण आधार सुविधा विकास निधि (आई.आर.डी.एफ.) की संचित निधि को बढ़ा कर अगले वर्ष 5,000 करोड़ रुपये करने की

अपने बजट भाषण में कृषि एवं ग्रामीण विकास का उल्लेख करते हुए श्री सिन्हा ने स्वीकार किया कि कृषि क्षेत्र में अब तक किए गए सुधार अपर्याप्त रहे हैं। इसके बाद वित्त मंत्री ने अपनी रणनीति को उजागर किया और कृषि को आर्थिक सुधार प्रक्रिया में समेटते हुए इसके विकास के लिए पर्याप्त ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करने, गांवों में सड़कों के विकास और बिजली वितरण व्यवस्था में सुधार के बारे में विस्तृत प्रस्तावों का खुलासा किया।

घोषणा की। उन्होंने इस बात पर संतोष प्रकट किया कि इस निधि के प्रचालन से गांवों में बुनियादी सुविधा देने के काम में अच्छी प्रगति हुई है। इसमें अब तक 1,84,000 परियोजनाओं को मंजूरी प्रदान की गई है। वित्त मंत्री ने इस सफलता से उत्साहित हो कर राज्यों की सहायता के लिए नाबार्ड द्वारा लागू की जाने वाली ब्याज दर को 11.5 प्रतिशत से घटा कर 10.5 प्रतिशत करने का निर्णय किया है।

वित्त मंत्री ने 1998–99 में प्रारम्भ की गई किसान क्रेडिट कार्ड योजना को सफल बताते हुए अगले तीन वर्षों में इसके योग्य सभी किसानों को इसके दायरे में लाने का लक्ष्य निर्धारित किया है। अब तक लगभग 1.1 करोड़ किसानों को क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। वित्त मंत्री बैंकों से भी यह कहेंगे कि अन्य क्रेडिट कार्डों की भांति किसान क्रेडिट कार्डों के धारकों को भी बीमा लाभ दिया जाए। नाबार्ड और भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) से चालू वर्ष के दौरान एक लाख स्वसहायता समूहों से जुड़ने को कहा गया है। नाबार्ड और भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 40–40 करोड़ रुपये के योगदान से नाबार्ड में एक लघु वित्त विकास निधि की स्थापना कर दी गई है। उन्होंने बताया कि नाबार्ड को गत वर्ष पूंजी अभिलाभ कर छूट बांड जारी करने की जो अनुमति दी गई थी उससे नाबार्ड को सामान्य से कम ब्याज दरों पर 1,000 करोड़ रुपये से अधिक की धनराशि जुटाने में मदद मिली है जिससे इस निधि की लागत कम हुई है। उन्होंने इस छूट को जारी रखने की घोषणा की है।

खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों को उत्पाद शुल्क से पूरी तरह छूट देकर और भंडारण क्षमता बढ़ाने को प्रोत्साहन देने के लिए करों में रियायत देकर कृषि क्षेत्र को एक नया बाजार उपलब्ध कराने की उम्मीद जगाई गई है। बजट में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्लीनिक और कृषि कारोबार केन्द्रों की स्थापना और गोदामों की स्थापना को प्रोत्साहित किया गया है।

बजट में चाय, काफी, गरी नारियल और सुखाए हुए नारियल पर सीमा शुल्क की दर को वर्तमान 35 प्रतिशत से बढ़ाकर 70 प्रतिशत करने का प्रस्ताव है। वैसे सभी कृषि उत्पादों पर पहले ही 35 प्रतिशत या उससे अधिक की शुल्क की दर लागू है। गेहूं में 50 प्रतिशत, चावल में 70 प्रतिशत और मक्का पर 50 प्रतिशत आयात शुल्क है। कच्चे खाद्य तेलों पर आयात शुल्क 35 प्रतिशत से बढ़ाकर 75 प्रतिशत कर दिया गया है। इसके साथ ही वित्त मंत्री ने किसानों को स्पष्ट आश्वासन दिया है कि यदि जब कभी भी कृषि उत्पादों के सस्ते आयातों की वजह से उनके हितों को कोई खतरा नजर आएगा तो सरकार आयात शुल्क में वृद्धि करने से परहेज नहीं

करेगी। बजट में कृषि क्षेत्र में सुधारों की रफ्तार तेज करने, निवेश को बढ़ावा देने, किसानों को आसानी से ऋण उपलब्ध कराने और विश्व व्यापार संगठन के करार से होने वाले सस्ते कृषि उत्पादों के आयात को हतोत्साहित करने के लिए ठोस कदम उठाए गए हैं।

छोटे किसानों की भंडारण क्षमता बढ़ाने में मददगार साबित होने वाली 1999 में घोषित ऋण संबंधी सब्सिडी स्कीम की चर्चा करते हुए श्री सिन्हा ने कहा कि फसलों के भंडारण के निधि के पोषण के लिए नाबार्ड अपनी ब्याज दरें 10 प्रतिशत से घटाकर 8.5 प्रतिशत कर रहा है जिससे खासतौर से छोटे किसानों को मजबूरी में अपनी फसल बेचने के लिए विवश नहीं होना पड़ेगा।

उन्होंने कहा कि कृषि स्नातकों द्वारा क्लीनिक और कृषि कारोबार केन्द्रों की स्थापना की एक नई योजना शुरू की जा रही है, जिसके लिए आसान शर्तों पर ऋण दिया जाएगा। पूर्वोत्तर राज्यों में कृषि सुधार हेतु फसल का उत्पादन बढ़ाने के लिए खेतों में जल प्रबंध योजना के तहत 70 करोड़ रुपये और बागवानी के समन्वित विकास के टेक्नोलाजी मिशन के लिए 38 करोड़ रुपये का प्रावधान किया जा रहा है।

श्री सिन्हा ने कहा कि विश्व में हम फलों और सब्जियों के सबसे बड़े उत्पादक हैं लेकिन समुचित भंडारण और प्रसंस्करण सुविधाओं के अभाव में उत्पादन का एक बड़ा भाग बर्बाद हो जाता है। इसलिए फलों और सब्जियों पर आधारित प्रसंस्करण उद्योग को उत्पाद शुल्क से पूरी छूट देने का प्रस्ताव है ताकि इस उद्योग की तरफ ज्यादा से ज्यादा उद्यमी आकर्षित हो सकें।

वर्ष 2001–2002 के बजट में देश के सभी गांवों में अगले छह वर्ष में बिजली मुहैया कराने का लक्ष्य रखते हुए ग्रामीण विकास के लिए गत वर्ष की तुलना में बजट में 336 करोड़ रुपये से अधिक की बढ़ोतरी की गई है। बजट में कुल 9,224.49 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। बजट में कहा गया है कि देश के 80 हजार गांवों में अभी भी बिजली नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत वितरण प्रणाली को सुधारे जाने पर बल देते हुए बजट में अगले छह वर्षों में शेष गांवों में भी बिजली पहुंचाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। दलितों, अनुसूचित जातियों जनजातियों की बस्तियों में तेजी से बिजली पहुंचाने के लिए ग्रामीण विद्युत निगम से राज्य विद्युत बोर्डों को ऋण सुविधा बढ़ाए जाने का प्रस्ताव है। इसी तरह ग्रामीण आधारभूत विकास कोष से ग्रामीण विद्युत कार्यों के लिए 750 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है।

वर्ष 2001–2002 के बजट में देश के सभी गांवों में अगले छह वर्ष में बिजली मुहैया कराने का लक्ष्य रखते हुए ग्रामीण विकास के लिए गत वर्ष की तुलना में बजट में 336 करोड़ रुपये से अधिक की बढ़ोतरी की गई है। बजट में कुल 9,224.49 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों का जाल बिछाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के लिए बजट में 2,500 करोड़ रुपये मुहैया कराने की घोषणा की गई है। चालू वित्त वर्ष में इस योजना के लिए 2,500 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए जा चुके हैं।

सभी गांवों में पेय जल आपूर्ति कराने की प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए बजट में इस मद के लिए केन्द्रीय आयोजना में प्रावधान बढ़ाया गया है। इसी तरह ग्रामीण क्षेत्रों में बंजर भूमि के विकास के लिए अनेक कदम उठाए गए हैं। स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के बारे में यह तथ्य भी उभर कर आया है कि वर्ष 2000–2001 जवाहर ग्राम समृद्धि योजना के लिए आवंटित किए गए 900 करोड़ रुपये में से मात्र 370 करोड़ रुपये का उपयोग हो पाने की आशा है। शायद इस निराशाजनक प्रदर्शन को देखते हुए ही नए बजट में इस मद पर सिर्फ 450 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम के लिए प्रावधान बढ़ाया गया। अन्नपूर्णा के लिए किए गए 90 करोड़ रुपये के प्रावधान में से भी सिर्फ 35 लाख रुपये का उपयोग हो पाने का अनुमान बजट से संशोधित अनुमानों में व्यक्त किया गया है। यही वजह है कि अब नए वित्तीय वर्ष में भी इसमें 35 लाख रुपये का ही प्रावधान रखा गया है। वैसे बजट में सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण की मद पर आवंटन को 733 करोड़ रुपये से बढ़ा कर 1,021.50 करोड़ रुपये कर दिया गया है। परन्तु ग्रामीण आवास के लिए आवंटन को 1,490 करोड़ रुपये से घटा कर 1,374 करोड़ रुपये कर दिया गया है। ग्रामीण जल आपूर्ति के लिए प्रावधान को 1,890 करोड़ रुपये से बढ़ा कर 1,944 करोड़ रुपये कर दिया गया है। वैसे ग्रामीण विकास विभाग, भू संसाधन विभाग और ग्रामीण विकास मंत्रालय के आवंटनों को सम्मिलित रूप से देखा जाए तो बजट में पूर्व वर्ष की तुलना में 5.65 करोड़ रुपये की वृद्धि की गई है। नए बजट में कुल आवंटन 12,286.83 करोड़ रुपये है।

गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने वालों के बारे में योजनाओं की घोषणा करते हुए वित्त मंत्री ने भूमिहीन कृषकों के लिए खेतिहर मजदूर बीमा योजना के नाम से एक विशेष कार्यक्रम की घोषणा की है। इसके अन्तर्गत लाभार्थियों को जनश्री बीमा योजना के अनुरूप लाभ प्राप्त होंगे। इसमें लाभार्थी को 60 वर्ष की आयु पूरी होने पर 100 रुपये प्रतिमाह की पेंशन भी मिलेगी। जो लोग युवावस्था में ही इस बीमा योजना में शामिल होंगे उन्हें प्रत्येक दस वर्ष बाद कुछ आवधिक भुगतान भी दिया जाएगा। इस योजना के लिए लाभार्थियों को छोटी–सी प्रीमियम राशि अदा करनी होगी।

ग्रामीण विकास की रणनीति के बुनियादी तत्वों को ध्यान में रख कर पेश किए गए बजट प्रस्तावों और अन्य घोषणाओं से यह उम्मीद बंधती है कि यह बजट ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अधिक फलदायी सिद्ध हो सकेगा। ❑

वर्ष 2001-2002 के बजट में कृषि और ग्रामीण विकास

राजेन्द्र उपाध्याय

एक समय था जब दुनिया में भारत की पहचान गांवों पर आधारित अर्थव्यवस्था वाले देश की थी, लेकिन समय के साथ–साथ यह पहचान बदली है। आज भारत कम्प्यूटर साफ्टवेयर जैसे अत्याधुनिक क्षेत्र में अग्रणी देश के रूप में जाना जाता है। यही नहीं, हम सुपर कम्प्यूटर का निर्माण ही नहीं कर सकते, बल्कि इनका निर्यात करने की स्थिति में भी हैं। अंतरिक्ष विज्ञान, परमाणु अनुसंधान और इसी तरह के अनेक क्षेत्रों में हमारी प्रगति का लोहा सारी दुनिया मानती है। लेकिन यह तो सिक्के का एक पहलू है। इसका एक और पहलू भी है। वैज्ञानिक और औद्योगिक क्षेत्र में तमाम प्रगति के बावजूद हमारी अर्थव्यवस्था का स्वरूप और उसमें गांवों का वर्चस्व कम नहीं हुआ है। यह बात और है कि विकास का ज्यादा लाभ गांवों की नहीं मिला है जिस कारण वहां रहने वालों को आज भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था अब भी कृषि पर आधारित है। हालांकि कृषि के क्षेत्र में देश ने प्रगति की है, लेकिन बढ़ती आबादी की वजह से खेती पर जनसंख्या का बोझ बढ़ता जा रहा है। एक ओर उत्पादकता में गिरावट के संकेत मिल रहे हैं तो दूसरी ओर इसमें अधिक लोगों को रोजी–रोटी देने की क्षमता नहीं रह गई है। ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचा भी पूरी तरह विकसित नहीं हो पाया है। पानी, बिजली, परिवहन, संचार, स्वास्थ्य, शिक्षा जैसी मूलभूत सेवाओं और सुविधाओं की कमी बनी हुई है जिसकी वजह से ग्रामीण आबादी का तेजी से शहरों की ओर पलायन हो रहा है। इस प्रवृत्ति ने देश के समग्र विकास के लिए समस्याएं बढ़ा दी हैं।

वर्ष 2001–2002 के आम बजट से जहां ग्रामीण विकास के बारे में सरकार की सोच का पता चलता है। वहीं यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वह समस्याओं के समाधान के लिए क्या कदम उठाना चाहती है। चूंकि ग्रामीण विकास कृषि से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है इसलिए यहां कृषि के क्षेत्र में उठाए गए कदमों को भी ग्रामीण विकास के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखना उचित होगा। अपने बजट भाषण के प्रारंभ में ही वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा ने यह बात स्वीकार की है कि लगातार दूसरी बार मानसून की वर्षा की अनियमितता के कारण कृषि उत्पादन में गिरावट आई है उन्होंने यह भी कहा कि सरकार के खाद्यान्न भंडारों में पर्याप्त अनाज होने के कारण कृषि उत्पादन में गिरावट का अर्थव्यवस्था पर बुरा असर नहीं पड़ा है। वित्त मंत्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि आर्थिक सुधारों ने देश को प्रगति की राह पर अग्रसर किया है लेकिन अभी संतुष्ट होकर बैठने का वक्त नहीं आया है। अर्थव्यवस्था के सामने उपस्थित अनेक चिंताओं का जिक्र करते हुए उन्होंने स्वीकार किया है कि "कृषि सुधार अपर्याप्त रहे हैं और हमारी कृषि को मानसून की असफलता निरंतर झेलनी पड़ रही है।" इससे निपटने के लिए उन्होंने कृषि क्षेत्र में सुधारों में तेजी लाने और खाद्य अर्थव्यवस्था के बेहतर प्रबंधन की नीति पर अमल का संकेत दिया है। निश्चय ही इस तरह के उपायों की आज सख्त जरूरत है क्योंकि किसानों की समस्याओं को सुलझाए बगैर देश में खाद्य सुरक्षा संभव नहीं हो पाएगी। हरित क्रांति के माध्यम से देश को अनाज का निर्यात करने का स्थिति में पहुंचाने में किसानों का बड़ा योगदान है। लेकिन आज किसान उत्पादकता में गिरावट और अपनी मेहनत के पर्याप्त दाम न मिलने से निराश हैं। इधर आर्थिक सुधार के दूसरे दौर में उन्हें कड़ी अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का भी सामना करना पड़ सकता है। इस बजट में कृषि उत्पादों की खरीद फरोख्त और एक राज्य से दूसरे राज्य में उनके लाने ले जाने पर लगे तमाम प्रतिबंध हटाने की घोषणा की गई है। इससे कृषि उत्पादों का अखिल भारतीय बाजार तैयार करने में मदद मिलेगी और किसानों को उनकी मेहनत के लिए वाजिब दाम भी मिल पाएंगे। पहली अप्रैल से विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के लागू होने से कई कृषि जिंसों के आयात से मात्रात्मक प्रतिबंध हट जाएंगे। इन्हें ध्यान में रखते हुए वित्तमंत्री ने कुछ चीजों पर सीमा शुल्क की

> *गांवों को सड़कों से जोड़ने के लिए प्रधानमंत्री द्वारा दिसम्बर 2000 में प्रारंभ की गई प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के लिए केंद्र के अंशदान के रूप में अगले वित्त वर्ष में भी 25 अरब रुपये देने का प्रस्ताव है।*

दरें बढ़ा दी हैं। इससे किसानों को अवश्य राहत मिलेगी। हालांकि खेती के लिए पूंजी की आवश्यकता पहले भी पड़ती थी लेकिन आज तो पूंजी के बिना खेती संभव ही नहीं है। किसानों की ऋण संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए वित्त मंत्री ने कई उपायों की घोषणा की है जिससे किसान खेती के लिए संसाधन जुटा सकेंगे। उन्हें आसान ऋण उपलब्ध कराने के लिए नाबार्ड की ब्याज दर 11.5 प्रतिशत से घटाकर 10.5 प्रतिशत कर दी गई है। इसके अलावा नाबार्ड की ग्रामीण आधारभूत सुविधा विकास निधि को 45 अरब रुपये से बढ़ाकर 50 अरब रुपये कर दिया गया है। एक अन्य महत्वपूर्ण घोषणा में वित्तमंत्री ने अगले पांच वर्षों में सभी पात्र किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड उपलब्ध कराने की बात कही है। अब तक देश भर में 1.10 करोड़ किसानों को ये कार्ड दिए जा चुके हैं। क्रेडिट कार्ड लेने वाले किसानों को बीमा सुविधा भी उपलब्ध कराई जाएगी। कार्ड धारक की आकास्मिक मृत्यु होने पर या विकलांगता की स्थिति में क्रमशः 50 हजार और 25 हजार रुपये का मुआवजा दिया जाएगा।

वितमंत्री ने कृषि क्षेत्र के लिए एक और महत्वपूर्ण योजना की घोषणा की है जिसका लाभ किसानों तथा कृषि–स्नातकों को मिलेगा। इसके अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि–कारोबार केंद्र खोले जाएंगे जिनमें मिट्टी के परीक्षण और खेती से संबंधित सलाहकार सेवाएं उपलब्ध कराई जाएंगी। नाबार्ड इन केंद्रों के लिए कृषि विज्ञान के बेरोजगार स्नातकों को आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराएगा। इन केंद्रों से कृषि के विविधीकरण के साथ–साथ प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को भी बढ़ावा मिलेगा। बजट में भंडारण सुविधाओं के विकास के लिए भी उपायों की घोषणा की गई है जिसकी बड़ी आवश्यकता थी। पर्याप्त भंडारण सुविधाएं न होने से बड़ी मात्रा में कृषि उत्पाद नष्ट हो जाते हैं। उम्मीद है कि निजी क्षेत्र में भंडारण सुविधाओं के विकास के लिए सरकार द्वारा घोषित रियायतों और सुविधाओं से आने वाले समय में भंडारण की समस्या का समाधान हो सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे के विकास की आवश्यकता को ध्यान में रखकर वित्तमंत्री ने अपने बजट भाषण में कई उपायों की घोषणा की है। राष्ट्रीय राजमार्ग विकास कार्यक्रम के अंतर्गत जहां देश में राजमार्गों के विकास की महत्वाकांक्षी योजना बना ली गई है वहीं गांवों को सड़क संपर्क के जरिये देश के अन्य भागों से जोड़ने के प्रयास जारी हैं। सड़कों का निर्माण एक खर्चीला काम है और सरकार के पास इसके लिए पर्याप्त संसाधनों का अभाव है। इसी बात को ध्यान में रखकर सरकार डीजल और पेट्रोल पर उपकर लगाकर सड़कों के विकास के लिए धन जुटाने की

बजट में गांवों में बिजली पहुंचाने के कार्य को भी समुचित महत्व दिया गया है। वित्तमंत्री के अनुसार देश में 80 हजार गांव ऐसे हैं जिसमें बिजली नहीं पहुंची है। उन्होंने अगले छह वर्षों में इन में बिजली पहुंचा देने का लक्ष्य रखा है।

साहसिक नीति पर अमल कर रही है। जहां देश के चार कोनों को स्वर्ण चतुर्भुज मार्ग से जोड़ने की योजना पर अमल शुरू हो गया है, वहीं ग्रामीण सड़कों, जिला सड़कों और प्रांतीय सड़कों का भी विकास किया जा रहा है। उपकर निधि से राज्यों को सड़कों के विकास के लिए 9.62 अरब रुपये उपलब्ध कराने का प्रस्ताव है। वैसे सड़कों के विकास के योजना खर्च में 93 प्रतिशत की बढ़ोतरी की गई है और इसे 98.27 अरब रुपये किया जा रहा है। इसके अलावा गांवों को सड़कों से जोड़ने के लिए प्रधानमंत्री द्वारा दिसम्बर 2000 में प्रारंभ की गई प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के लिए केंद्र के अंशदान के रूप में अगले वित्त वर्ष में भी 25 अरब रुपये देने का प्रस्ताव है। यहां यह बात भी ध्यान देने की है कि डीजल उपकर के रूप में प्राप्त राशि का आधा हिस्सा ग्रामीण सड़कों के विकास पर खर्च होता है।

बजट में गांवों में बिजली पहुंचाने के कार्य को भी समुचित महत्व दिया गया है। वित्तमंत्री के अनुसार देश में 80 हजार गांव ऐसे हैं जिसमें बिजली नहीं पहुंची है। उन्होंने अगले छह वर्षों में इन में बिजली पहुंचा देने का लक्ष्य रखा है और गांवों में बिजली की सप्लाई में सुधार के लिए एक पैकेज तैयार किया है। इसके अनुसार प्रधानमंत्री ग्रामोद्योग योजना के तहत राज्यों को गांवों में बिजली पहुंचाने के लिए सहायता बढ़ाई जाएगी। इसी तरह अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा कमजोर वर्गों की बस्तियों में बिजली पहुंचाने के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण निगम को दी जाने वाली ऋण सहायता बढ़ाने का प्रस्ताव है। गांवों में बिजली पहुंचाने के साथ–साथ विद्युत आपूर्ति की गुणवत्ता बढ़ाने पर भी जोर दिया जा रहा है और इसके लिए ट्रांसमिशन व डिस्ट्रिब्यूशन प्रणालियों को सुदृढ़ करने की योजना है। ग्रामीण विद्युतीकरण निगम के संसाधनों में वृद्धि के लिए उसे आयकर में छूट देकर आकर्षक बांड जारी करने की अनुमति दी गई है।

दूर संचार को बजट में जो महत्व दिया गया है उसका लाभ गांवों तक पहुंच सकता है। वितमंत्री ने बताया है कि देश में 8 लाख सार्वजनिक टेलीफोन बूथ हैं और प्रत्येक 3.5 लोगों पर एक टेलीफोन उपलब्ध है। हाल मे दूरसंचार क्षेत्र में जो सरगर्मी दिखाई दी है और स्थानीय तथा एस.टी.डी. काल की दरों में जो संशोधन हुए हैं उनसे ग्रामीण लोगों को फायदा होगा। दूर संचार मंत्रालय देश के सभी गांवों को टेलीफोन सुविधा उपलब्ध कराने की योजना पर अमल कर रहा है और यह कार्य बजट में घोषित उपायों से पूरा होने की अच्छी संभावना है।

रोजगार के अवसर बढ़ाए बिना गांवों के विकास की बात सोची भी नहीं जा सकती। रोजगार के अवसरों में कमी गांवों से लोगों के शहरों में पलायन का मुख्य कारण है। पिछले साल ग्रामीण रोजगार के लिए 68.95 अरब रुपये आवंटित किए गए थे जिसमें से 64.03 अरब रुपये का इस्तेमाल हो पाया। गांवों में बेरोजगारी की गंभीर समस्या के मद्देनगर धनराशि का उपयोग न हो पाना चिंता का विषय है। पिछले साल के मुकाबले

इस साल ग्रामीण रोजगार के मद के लिए आवंटन में कटौती का प्रस्ताव किया गया है और यह राशि 68.64 अरब रुपये कर दी गई है। गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वालों के लिए सुनिश्चित रोजगार योजना के लिए 16 अरब रुपये रखे गए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आवंटित धनराशि का समुचित उपयोग हो और पिछले साल की तरह यह बिना उपयोग के न रह जाए।

ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों की स्थापना के लिए स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के तहत पांच अरब रुपये आवंटित किए गए हैं। ग्रामीण आवास योजना के तहत 9.84 लाख मकानों के निर्माण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 15.27 अरब रुपये का प्रावधान किया गया है।

बजट में सामाजिक सुरक्षा की विभिन्न योजनाओं का फायदा ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को भी मिलेगा। पिछले साल के बजट में वित्तमंत्री ने जनश्री बीमा योजना नाम की एक सामूहिक बीमा योजना शुरू करने की घोषणा की थी। प्रधानमंत्री ने 10 अगस्त 2000 को इसका उद्घाटन किया था। अब तक गरीबी रेखा से नीचे के करीब एक लाख लोगों को इसके दायरे में लाया जा चुका है। वित्तमंत्री ने इस बार के बजट में सामाजिक सुरक्षा के दो और कार्यक्रमों की घोषणा की है। ये हैं खेतिहर मजदूर बीमा योजना और शिक्षा सहयोग योजना। पहले के अंतर्गत बीमा कराने वाले को 60 वर्ष की उम्र के बाद एक सौ रुपया मासिक पेंशन दी जाएगी। शिक्षा सहयोग योजना में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के बच्चे को नौवीं से बारहवीं तक की पढ़ाई के लिए एक सौ रुपया महीना आर्थिक सहायता दी जाएगी। ये योजनाएं जीवन बीमा निगम संचालित करेगा।

वित्तमंत्री ने सर्वशिक्षा अभियान के तहत देश में 14 साल तक के सभी बच्चों को आठ साल की बुनियादी शिक्षा उपलब्ध कराने के कार्यक्रमों को सुदृढ़ करने की घोषणा की है।

> *यह बात किसी से छिपी नहीं है कि गांवों के कई प्रतिभाशाली बच्चे आर्थिक तंगी के कारण उच्च तथा तकनीकी शिक्षा पूरी नहीं कर पाते। वित्तमंत्री ने ऐसे विद्यार्थियों के लिए एक व्यापक शिक्षा ऋण योजना की घोषणा की है जिसके अंतर्गत उन्हें भारत में उच्च तथा तकनीकी शिक्षा के लिए सात लाख रुपये और विदेशों में शिक्षा के लिए पंद्रह लाख रुपये तक का ऋण प्राप्त हो सकेगा।*

व्यावसायिक शिक्षा सुविधाओं के ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार के लिए निजी क्षेत्र को गांवों में व्यावसायिक शिक्षा व प्रशिक्षण देने वाले संस्थान खोलने पर आयकर संबंधी छूट देने का प्रस्ताव किया गया है।

यह बात किसी से छिपी नहीं है कि गांवों के कई प्रतिभाशाली बच्चे आर्थिक तंगी के कारण उच्च तथा तकनीकी शिक्षा पूरी नहीं कर पाते। वित्तमंत्री ने ऐसे विद्यार्थियों के लिए एक व्यापक शिक्षा ऋण योजना की घोषणा की है जिसके अंतर्गत उन्हें भारत में उच्च तथा तकनीकी शिक्षा के लिए सात लाख रुपये और विदेशों में शिक्षा के लिए पंद्रह लाख रुपये तक का ऋण प्राप्त हो सकेगा। इस ऋण पर ब्याज दर कम होगी और इसे आसान किस्तों में वापस किया जा सकेगा। चार लाख रुपये तक के ऋण के लिए तो कोई जमानत भी नहीं ली जाएगी। अगर इस योजना को सही तरीके से लागू किया जाए तो गांवों के प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए यह एक वरदान साबित हो सकती है।

महिलाओं को अधिकार संपंन्न बनाने के लिए सन् 2001 में मनाए जा रहे महिला अधिकारिता वर्ष के अंतर्गत गरीब महिलाओं को आर्थिक गतिविधियों में सहायता के लिए राष्ट्रीय महिला कोष को सुदृढ़ करने का प्रस्ताव है। देश के 650 विकास खंडों में महिलाओं के स्व–सहायता समूह, बनाकर जरूरतमंद महिलाओं को सहायता दी जाएगी। वृंदावन, काशी और अन्य स्थानों में रह रही गरीब विधवा महिलाओं और बेसहारा महिलाओं के लिए भी एक नई योजना का प्रस्ताव वित्तमंत्री ने किया है।

इस तरह वित्त मंत्री ने ग्रामीण भारत की तस्वीर में बदलाव लाने के लिए अनेक उपायों की घोषणा की है। अगर इन उपायों पर सही ढंग से अमल किया गया तो ग्रामीणों की हालत में सुधार की दिशा में कुछ प्रगति अवश्य होगी ❑

लघुकथा

अहसास

वीरेन्द्र कुमार भारद्वाज

घर जाने के लिए अभय अपने बूढ़े बाबा के साथ पटना से बस में चढ़ा। बस की सभी सीटें भरी थीं। बूढ़े बाबा की याचक निगाहें हर एक को घूरने लगीं पर किसी ने उनसे आंखें मिलाने की नेकी नहीं की। अभय को क्रोध हो आया, पर अपने व्यवहार को याद कर खुद पर शर्मिन्दा हुआ। उसने भी तो कई बार बस में यात्रा की है, पर अपनी बगल में खड़े किसी बूढ़े अथवा महिला को अपनी सीट बैठने को कब दी है?

उसे अहसास हो गया कि व्यक्ति को खुद दूसरों के साथ वैसा व्यवहार करना चाहिए जैसी वह अपेक्षा करता हैं।

अभय ने प्रण किया कि वह स्वस्थ रहते बड़े–बुजूर्गों की हरसंभव मदद करेगा। ❑

सरसों के फूल

अनिल कुमार चौबे

पूष का महीना चल रहा था। खेतों में सरसों फूल रही थी। दूर–दूर तक नजर जाने पर ऐसा लगता था मानो हरा फर्श बिछाकर उस पर पीला कालीन बिछा हो। पूष की रातों की कड़कड़ाती सर्दी हड्डियों में घुस कर शरीर को अकड़ा देती थी।

सांझ का समय था। दिन जल्दी डूब गया था। सूर्य नारायण अभी उत्तरायण नहीं हुए थे। गेहूं, चनों में पानी के कारण खेतों में मिट्टी गीली थी। इस कारण वातावरण कुछ अधिक ही ठंडा था। ठंडी हवा शरीर को कंपकंपा रही थी।

हरिया ने अपने सिर रखा चारे का गट्ठा आंगन में पटक दिया। भारी गट्ठे के कारण सर्दी में भी हरिया के माथे पर पसीने की बूंदें उभर आईं थीं।

गट्ठे की आवाज सुन कर लछिआ आंगन में आ गई। पेट में बच्चा होने से लछिया ढंग से खड़ी भी नहीं हो पा रही थी।

हरिया की आहट सुन कर सार में बंधी श्यामा रंभाई।

"काय श्यामा, काय रंभा रई है। मैं तेरे लाने खूब सारी हरी घांस ले आओ। अब खूब अफर के खईयो।" हरिया ने सार में बंधी श्यामा की ओर देख कर टेर लगाई।

श्यामा पुनः रंभाई मानो उसने हरिया की बात समझ ली हो।

"पानी तो ले आ एक लोटा भरके गरो सूख रओ है।" हरिया ने अपनी पत्नी लछिया की ओर देख कर कहा।

"अच्छा लाथों" – कमर पर हाथ रख कर लछिया मंदिम स्वर में बोली।

"अब रेन दे तेरी बैसेई बस की नई है। मैं खुदई भर के पी लें हों" – उठते हुए हरिया बोला –

"अब इत्ती भी कमजोर नई हो के एक लौटा पानी भी न भर सको" लछियां बोली।

"मोए मालूम है तू कितनी पहलवान है, बैठ जा" कह कर हरिया तेज कदमों से अंदर की ओर बढ़ गया। घिनोची से गागर में से एक लौटा पानी भर कर गट–गट कर खड़े–खड़े ही पी गया।

"अब जाके ठंडक भई" कहते हुए उसने अपने माथे पर उभर आई पसीने की बूंदों को कुर्ते से पोंछा।

"चलो हाथ गोड़े धो लो मैं जब तक थारी लगाथों" लछिया ने कहा।

"तरकारी तो कछु बनी न हुई थे।" हरिया बोला।

"तरकारी का धरी है, सरसों की भाजी बनाई है" बोली लछिया।

"हम गरीबों की भी जिन्दगी खूब है, अगर भगवान ने भाजी नई बनाई होती तो हमें सूखी रोटी पानी से गटकनी पड़ती।" उठते हुए हरिया बोला।

"काय नत्थी काकी आई थी का।" हरिया पुनः बोला।

"हां, आई तो थी और कै रइ थीं कै अब जियादा दिन नई है कबहूं भी हो सकत है।" बोली लछिया।

"अच्छा" कह कर चुप हो गया। नत्थी गांव में दाई का काम करती थी।

"काय रूपैया को का भओ" – लछिया बोली।

"का होने थे, पटेल ने आज तक सोड़ावीन की कटाई की मजदूरी नई दई। के बार धूम आओ। मैने मेरी आफत भी बताई लेकिन आज कल कै के घुमा रओ हैं। अब लड़ भी नई सकें, बड़े आदमी जो है। हमाई परेशानी कोई देखत नई है।" दुःखी मन से हरिया बोला।

"फिर का करें है। साहूकार भी उधार न दे है और बनिया भी सौदा उधार नई दे है, जा तो भोतई बड़ी आफत आ गई" लछिया बोली।

"मेरी तो एक समझ में आत है" हरिया बोला।

"का"

"जा श्यामा खों साहूकार खों बेच दें, बाकी नजर भी भोत दिनों से ई पे है।" सोचते हुए हरिया बोला।

"नई जाय तो मैं न बेचन दे हों, मैंने मोड़ा मोड़ी जैसों ऊखों पालो है आज जब जाके दूध को टेम आओ तो कैरए हो बेच दो, जो नई हो सके।" एकदम से तेज स्वर में लछिया बोली।

"फिर का करें मेरी तो समझ में नई आ रई", खीज कर हरिया बोला

"भगवान पे भरोसा करो जब वा ने खुशी को टेम दओ है तो कई से पैइसा भी दे है। हम गरीबों की तो जिन्दगी बई के सहारे कटत है। मैंने तो बब्बा महाराज के कथा बोल दई है, जब सब से निपट जे हैं तो हम कथा करा दे हैं।" लछिया दिलासा भरे स्वर में बोली।

"हां अब तो भगवान काई आसरो बचो है"

"तो फिर बेई पार लगें है" बात समाप्त करते हुए लछिया बोली।

बात मध्य प्रदेश के विदिशा जिले की है। हरिया ग्रामीण कृषक मजदूर है लछिया उसकी पत्नी है। सम्पत्ति के नाम पर एक टपरा एवं श्यामा नाम की एक गाय है। शादी के पांच साल बाद पहली बार लछिया मां बनने जा रही है। लेकिन धन के अभाव के कारण दोनों परेशान थे। हरिया सीधा सादा मजदूर था जो अपने काम से काम रखता था। जैसा कि गांव में होता है गांव के पटेल ने आज तक सोयाबीन की कटाई की मजदूरी नहीं दी थी। इसलिए परेशान थे हरिया दम्पत्ति।

"लछिया बाई है का", ग्रामीण पोस्टमेन ने आकर दरवाजे पर आवाज लगाई।

"हां भईया, कई से चिट्ठी पत्री आई है का," लछिया बोलीं।

"अरे चिट्ठी पत्री नहीं आई, मनीआर्डर आओ है।"

"कैसो मनीआर्डर है भईया, हम तो कुछ

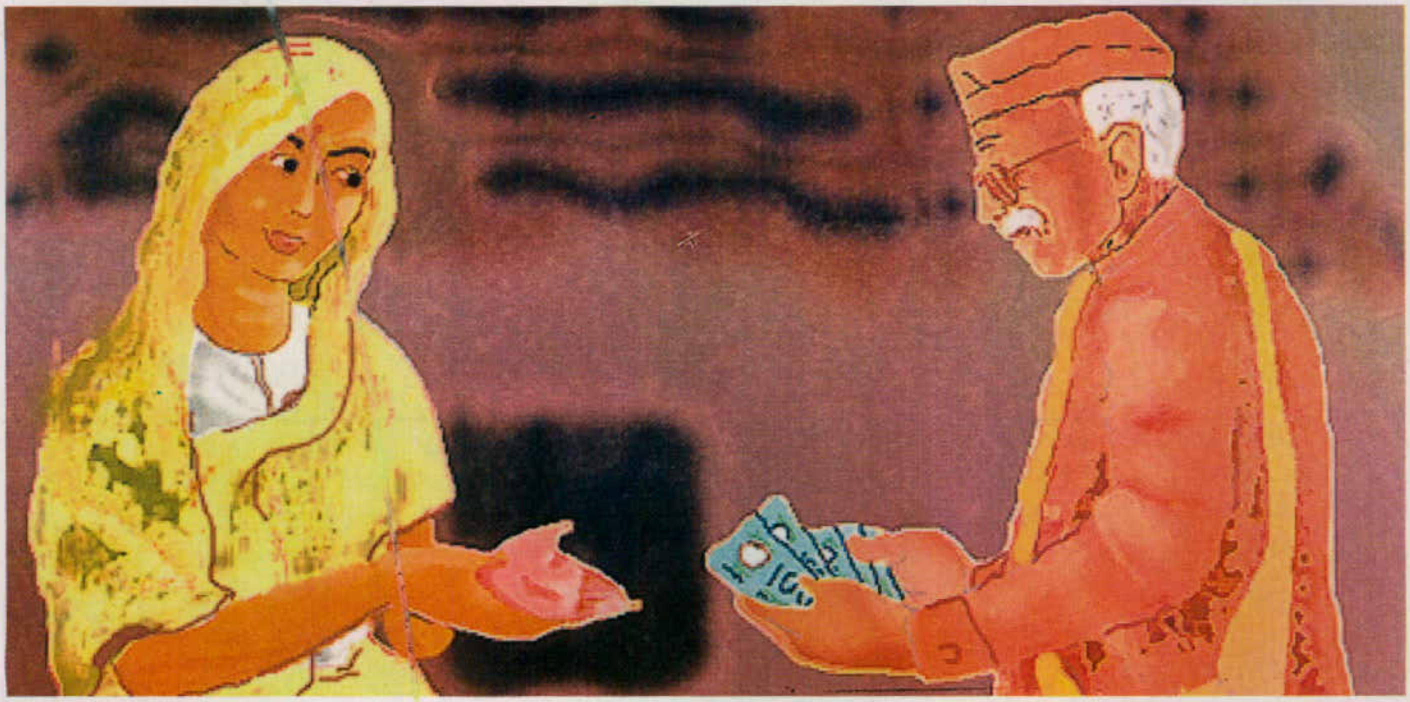

जानत नई हैं" लछिया बोली।

"जिसका नाम गरीबी की रेखा में होता है उन्हें सरकार पहले और दूसरे बच्चे के होने पर पांच सौ रुपये राष्ट्रीय मेटरनिटीबेनीफिट योजना के देती है। वही रुपये जनपद पंचायत ने भिजवाए हैं।" पोस्टमेन ने कहा तो "काय भईया जै पईसा का हमें वापिस करने पड़ेगो?" लछिया बोली।

"नहीं ये हमें खर्चे के लाने है।"

"जा तुमने भोतई अच्छी खबर दई है तुम बैठ जाओ मैं तुम्हे पानी लाथों" कह कर लछिया अंदर चली गई।

पोस्टमैन बैग से मनीआर्डर फार्म एवं स्टाम्प पेड निकालने लगा। तभी लछिया लोटा में पानी भर लाई। पानी पीकर पोस्टमैन बोला–

"तो यहां अंगूठा लगा दो"

"हम अब अगूंठा नई लगाहें"

"क्यों"

"अब हम दसखत करन लगे हैं।"

"यह तो अब बहुत अच्छी बात है" कहकर पोस्टमैन ने जेब से लीड निकाल कर लछिया की ओर बढ़ा दी। लछिया ने दस्खत कर दिए इसके बाद पोस्टमैन ने जेब से 100–100 के पांच नोट निकाल कर लछिया की ओर बढ़ा दिए और पेडल मार कर आगे बढ़ गया।

"काय कछु इन्तजाम भओ," दोपहर में हरिया के आने पर लछिया ने पूछा।

"का भओ है" दुःखी और उदास होकर हरिया बोला।

"एक खुशखबरी सुनाऊ" भेदभरी मुस्कराहट से लछिया बोली।

"कहो"

"अच्छा तुम्हें कित्ते रुपये की जरूरत है"

"कम से कम सोदा लावे में पांचक सौ रुपये तो लगई जै हैं" हरिया बोला।

"अगर मैं तुमें पांच सौ दे देऊ तो मोये का मिलेगो"

"तोय का मिलेने है, सब कछु तो तोय तो कर रओ हो"

"वो तो है फिर भी।"

"बातें जिना कर, सब कुछ साफ साफ कै" हरिया बोला।

कुछ कहने के स्थान पर लछिया ने पांच सौ रुपये निकाल कर हरिया की ओर बढ़ा दिए। रुपये देख कर हरिया चकित रह गया फिर बोला –

"इत्ते रुपैया तेरे पास का से आये"

"आज पोस मेन दे गओ।"

"काय के"

"कछु मेटरनिटी की कै रओ थो"

"अरे बेई तो नई जो सरपंच ने तेरा फारम कातक के महीना में भरवाओ थो।" हरिया बोला।

"ओ शायद बेई हुईयें।"

"जे पईसा बिलकुल सई टेम पे मिले हैं। अब मेरी परेशानी खतम हो गई, अब तेरो सौदा सब आ जेहे," लम्बी सांस लेकर हरिया बोला।

शाम के समय जब हरिया गाय दुह कर उठा तो लछिया बोली "सुनो"

"काय का बात है"

"तुम जरा नत्थी काकी को बुला दो"।

"काय जादा परेशानी हो रई है"

"हां अब सहन नई हो रई हो सके तो पड़ोसी की धन्नी काकी को पैले बुला दो।" पीड़ा भरे स्वर में लछिया बोली।

"ठीक है" कह कर हरिया उठ कर चला गया।

नत्थी काकी के आने के दो घंटे बाद लछिया ने एक फूल से स्वस्थ लड़के को जन्म दिया।

दो दिन बाद सौर उठने पर हरिया लछिया के पास खड़ा था लछिया खटिया पर पड़ी थी। कमजोरी से उसका चेहरा पीला पड़ा था लेकिन माता बनने की खुशी से चेहरा दमक रहा था। सिर पर हरी साड़ी का पल्लू बंधा हुआ था। पूरे कमरे में अजवाइन की खूशबू फैली हुई थी।

"आज तो तुम बिलकुल सरसों के फूल जैसी खिल रई हो" मुस्कराकर हरिया बोला।

लछिया ने लजाकर चेहरा छुपा लिया। ❑

ग्रामीण विकास हेतु कुशल प्रशिक्षण नीति की आवश्यकता

प्रो. एस.एन. मिश्रा

चूंकि ग्रामीण विकास एक चयनित शर्त के समान है अतः ग्रामीण विकास संबंधी दृष्टिकोण और उससे जुड़ी व्यूहरचना विभिन्न देशों में विभिन्न तरह की होती है। यह उस देश के प्रबुद्ध वर्ग को विचारधारा, राजनीतिक इच्छा शक्ति, संरचना एवं राष्ट्रीय आवश्कयताओं पर निर्भर करती है। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि ग्रामीण विकास एक व्यूहरचना की तरह है जिसका उद्देश्य सामाजिक और राजनैतिक विकास करना होता है तथा जिसका विशेष झुकाव समाज के गरीब तबके की तरफ होता है।

जहां तक भारत में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में किए गए विभिन्न प्रयोगों का प्रश्न है, दुर्भाग्यवश हम स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद से आज तक एक विरोधाभास की भूल भुलैया में भटकते रहे हैं। हमारी विकास की जो प्रक्रिया रही है वह आमतौर पर एकपक्षीय रही है जिसका झुकाव हमेशा शहरी क्षेत्रों की तरफ ही रहा है। इस विरोधाभास का प्रत्यक्ष परिणाम यह है कि जहां एक ओर समाज का एक छोटा–सा हिस्सा जेट युग में प्रवेश कर गया वहीं उसका बहुत बड़ा हिस्सा आज भी मध्यकालीन जीवन–शैली के आधार पर अपनी नैया पार लगाने में लगा है।

भारत में ग्रामीण विकास का दूसरा दुर्भाग्यपूर्ण पक्ष यह रहा है कि इसके लाभ से ग्रामीण समाज का बहुसंख्यक वर्ग लाभान्वित होने से वंचित रहा है। लेकिन सौभाग्य से अब ग्रामीण विकास के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए प्रशासकीय एवं लोकतांत्रिक संस्थाओं के विकेन्द्रीकरण पर विशेष बल दिया जा रहा है। इसका मुख्य कारण है कि स्थानीय स्तर पर विकास की गाड़ी पंचायती राज संस्थाओं एवं नौकरशाही के बल पर ही चलती है। लेकिन दोनों के बीच आपसी अविश्वास, समन्वय की कमी की समस्या और उत्साह का अभाव एक दीर्घकालीन रोग की तरह आज भी उन्हें जकड़े हुए है। अतः उन्हें जनता की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें कुशल एवं वैज्ञानिक प्रशिक्षण का कवच पहनाया जाए।

यहां पर प्रश्न उठता है कि आखिर प्रशिक्षण क्यों? इसके उत्तर में 1996 का राष्ट्रीय प्रशिक्षण नीति परिपत्र कहता है कि अपने उद्देश्यों की प्राप्ति एवं कार्यकुशलता में वृद्धि लाने के लिए प्रशिक्षण द्वारा मानव संसाधन में व्यावसायिक ज्ञान, समझदारी और कला का विस्तार व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तर पर लाना अति आवश्यक है। प्रशिक्षण संगठन में आने वाली चुनौतियों के प्रति कार्यकर्ताओं को उनका सामना करने के लिए तैयार करता है। लेकिन प्रशिक्षण का उद्देश्य ज्ञानार्जन के साथ–साथ उसे कारगर रूप देने की तरफ भी होना चाहिए। प्रशिक्षण का मूल मंत्र यह है कि वह प्रशिक्षणार्थियों की कार्यकुशलता एवं संगठनात्मक उद्देश्यों के विस्तार के बीच समुचित समन्वय स्थापित करे। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण के माध्यम से ऊंचे स्तर की ईमानदारी, चरित्रबल एवं सार्वजनिक जीवन में सहजता लाई जा सकती है।

चूंकि सामाजिक और राजनैतिक वातावरण में लगातार परिवर्तन होता रहता है। अतः सरकारी तंत्र के लिए यह अति आवश्यक है कि उन परिवर्तनों से लड़ने के लिए अपने को पूर्ण रूप से तैयार करें। अतः विभिन्न स्तर पर काम करने वाले कर्मचारियों एवं जनप्रतिनिधियों को प्रशिक्षण की मूल आवश्यकता की जानकारी एवं उनका विश्लेषण अति आवश्यक है क्योंकि इस जानकारी के बाद ही हम सभी स्तर के कर्मचारियों एवं जन–प्रतिनिधियों के प्रशिक्षण हेतु एक सही पाठ्यक्रम तैयार कर सकते हैं।

यहां पर पुनः प्रश्न आता है कि प्रशिक्षण किस लिए एवं क्यों। इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है : (अ) लोकतांत्रिक आवश्यकताओं, जनता की आकांक्षाओं तथा संगठनात्मक एवं तकनीकी विकास के प्रति जागरूक करने के लिए, (ब) लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता तथा निर्णय लेते समय सहभागिता के विचार को प्राथमिकता देने के लिए, (स) तकनीकी, आर्थिक एवं सामाजिक विकास के प्रति ज्ञान में वृद्धि के लिए, (द) एक वैज्ञानिक मानसिकता पैदा करने के लिए तथा (ध) ऊंचे स्तर की व्यावसायिक उपलब्धियां हासिल करने के लिए जिसके साथ जवाबदेही भी शामिल हो, प्रशिक्षण आवश्यक है।

ऊपर वर्णित प्रशिक्षण के जो उद्देश्य बताए गए हैं, वे मात्र कर्मचारियों के लिए ही नहीं बल्कि हमारी लोकतांत्रिक संस्थाओं, ग्राम से संसद तक के प्रतिनिधियों के लिए भी हैं। यहां आवश्यकता इस बात की है कि प्रशिक्षण सिर्फ एक बार के लिए ही जरूरी नहीं है बल्कि कुछ अंतराल के बाद अवलोकन एवं मूल्यांकन के आधार पर उसे बार–बार दुहराया जाना चाहिए ताकि भविष्य की बदलती हुई परिस्थितियों के लिए जन प्रतिनिधि अपने आप को सक्षम कर सकें।

इस संदर्भ में 1996 की राष्ट्रीय प्रशिक्षण नीति यह कहती है कि प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य है :

(1) व्यक्ति एवं संगठन की कार्यकुशलता में निरंतर वृद्धि करना तथा नए–नए व्यावसायिक ज्ञान अर्जित करना (2) व्यावसायिक आवश्यकताओं को समझने के

लिए आपसी समझदारी एवं सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक वातावरण जिसमें उन्हें काम करना है, की सही जानकारी द्वारा अपने को तैयार करना तथा (3) अपनी सोच को सही एवं सकारात्मक दिशा में निर्देशित करना।

इन उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में किसी भी प्रशिक्षण कार्यक्रम को लागू करने से पहले एक खाका तैयार करना होगा जो इस प्रकार हो : (1) प्रशिक्षण की आवश्यकता का विश्लेषण – जिसमें संगठन एवं उसमें कार्यरत विभिन्न स्तर के कर्मचारियों की आवश्यकता शामिल हो, (2) विश्लेषण के आधार पर प्रशिक्षण कार्यक्रम की सही रूप–रेखा तैयार करना, (3) प्रशिक्षण संबंधी मूल संरचना की व्यवस्था करना जिसमें कि कुशल प्रशिक्षण भी शामिल है, (4) प्रशिक्षण का प्रारम्भ, (5) प्रशिक्षण के दौरान अवलोकन एवं प्रशिक्षण के बाद उसका आकलन, (6) दो प्रशिक्षणों के बीच अंतराल का वैज्ञानिक प्रबंधन, (7) प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण तथा (8) पूरी प्रशिक्षण प्रक्रिया पर कुछ–कुछ अंतराल के बाद निगाह रखना ताकि उनमें रह गई त्रुटियों को दूर किया जा सके।

ऊपर लिखित संदर्भ में जब 1992 में संविधान का 73वां संशोधन पारित हुआ तथा जन प्रतिनिधियों को ग्रामीण विकास के एक बड़े कारक के रूप में स्वीकार किया गया तो ग्रामीण विकास मंत्रालय ने राष्ट्रीय प्रशिक्षण नीति की पृष्ठभूमि में एक अपनी प्रशिक्षण नीति बनाई जिसका उद्देश्य था स्थानीय नौकरशाही तथा स्थानीय जनप्रतिनिधियों को बदलती हुई परिस्थितियों से अवगत कराना तथा भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए उन्हें प्रशिक्षित करना जिससे ग्रामीण विकास के सही लक्ष्य हासिल किया जा सके।

इसके तहत ग्रामीण विकास मंत्रालय ने राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान, हैदराबाद, लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासनिक संस्थान, मंसूरी तथा भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली को प्रशिक्षण हेतु नोडल संस्था के रूप में अपनाया। इन संस्थानों की जिम्मेदारी निर्धारित की गई कि प्रशिक्षण आवश्यकताओं का विश्लेषण करते हुए राज्य स्तर की संस्थाओं के लिए प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था करें और ऐसे मास्टर ट्रेनर तैयार करें जो राज्य स्तर पर जाकर उन राज्यों की आवश्यकताओं के अनुसार जिला स्तर पर प्रशिक्षक तैयार करें और इस तरह गांव से लेकर राज्य स्तर तक प्रशिक्षण का एक तंत्र तैयार हो जाए ताकि सभी कर्मी चाहे वह स्थानीय स्तर के नौकरशाह हों या जन–प्रतिनिधि, अपनी–अपनी क्षमता एवं योग्यता के अनुसार ग्रामीण विकास के उद्देश्यों को हासिल करने में सहभागी बनें। यह व्यवस्था तीन चार वर्षों तक इन नोडल संस्थाओं द्वारा बड़ी कुशलतापूर्वक चलाई गई लेकिन इसका समुचित अंतरण नीचे तक नहीं हो सका, क्योंकि राज्य तथा जिला स्तर पर समुचित प्रशिक्षण मूल रचना का अभाव था और यदि प्रशिक्षण केन्द्र थे भी तो उनमें प्रशिक्षक नहीं थे। वैसी हालत में जिला स्तर के जनसेवियों को ही प्रशिक्षित किया जा सका जो कि कुछ समय के अंतराल तक इधर–उधर स्थानांतरित हो गए क्योंकि वे सभी सरकारी कर्मचारी थे और इससे पूरे प्रशिक्षण का ताना बाना ही छिन्न–भिन्न हो गया। अतः जिस पवित्र भावना के साथ यह प्रशिक्षण व्यवस्था लागू की गई वह संतोषजनक नहीं रही क्योंकि राज्य स्तर या विभिन्न संस्थाओं में प्रशिक्षण भी नहीं हो पाया जिसकी वजह से उनके अन्दर सहभागिता की भावना नहीं आ सकी। समय के साथ ही ग्रामीण विकास मंत्रालय ने भी प्रशिक्षण पर वह ध्यान नहीं दिया जो देना चाहिए तथा नतीजा हुआ कि विकास पर निर्धारित की गई राशि या तो खर्च नहीं हो पाई, या आंशिक रूप से खर्च हुई या गलत दिशा में खर्च की गई। अतः ग्रामीण विकास की झोली में पड़े वही ढाक के तीन पात।

पूरे देश को विभिन्न प्रशिक्षण क्षेत्रों में बांट देना चाहिए और हर क्षेत्र के लिए अलग–अलग क्षेत्रीय मानीटरिंग समिति होनी चाहिए तथा उनके ऊपर राष्ट्रीय स्तर पर अवलोकन एवं मूल्यांकन समिति होनी चाहिए जो कि न केवल प्रशिक्षण एवं प्रशिक्षण से जुड़ी समस्याओं का ही मूल्यांकन करे बल्कि ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों का भी अवलोकन एवं मूल्यांकन करे तभी हम सही अर्थ में ग्रामीण विकास के लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में जब हम ग्रामीण विकास का लेखा–जोखा करने बैठते हैं तो हम पाते हैं कि ग्रामीण विकास के उद्देश्यों की प्राप्ति जितनी महत्वपूर्ण है उससे कम महत्वपूर्ण नहीं है उसमें लगे लोगों को प्रशिक्षण किया जाना।

यह प्रसन्नता की बात है कि अब ग्रामीण विकास मंत्रालय पुनः प्रशिक्षण के महत्व को स्वीकार करने लगा है और इस दिशा में कुछ ठोस कदम उठाने के लिए सोच रहा है। यह इस बात से स्पष्ट होता है कि अभी निकट भविष्य में ही ग्रामीण विकास मंत्रालय ग्रामीण विकास के लिए प्रशिक्षण पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित कर रहा है।

इसके लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय की सराहना करते हुए यह कहना है कि जिस तरह पंचायती राज संस्थाओं के क्रियाकलाप में बदलाव आ रहे हैं, जिस तरह से विभिन्न ग्रामीण विकास संबंधी कार्यक्रमों की पुनर्संरचना की जा रही है, स्थानीय स्तर पर योजना बनाने पर जिस तरह से नई–नई प्रबंधन तकनीकें अपनाई जा रही हैं, उन सभी जटिलताओं को ध्यान में रखते हुए जब तक हम एक कुशल प्रशिक्षण नीति नहीं तैयार करते, हम अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पाएंगे।

दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि कर्मियों से संबंधित व्यावहारिक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए नई–नई प्रबन्धन तकनीक जैसे प्रोजेक्ट निर्माण क्रियान्वयन आदि के क्षेत्र में कुशल प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए। साथ ही कर्मियों के अन्दर आपस में ओहदे के अनुसार छोटे–बड़े का भेद हटा कर समानान्तर प्रशिक्षण प्रदान किया जाए, ताकि वे एक दूसरे की कठिनाइयों एवं समस्याओं को समझ सकें और भविष्य में सही तालमेल के साथ

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में अपना सफल योगदान कर सकें। चूंकि स्थानीय नौकरशाही और स्थानीय जन प्रतिनिधि एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखते हैं तथा हमेशा एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की भी है कि इन दोनों का मिला–जुला प्रशिक्षण कार्यक्रम भी साथ–साथ चले। लेकिन इन सभी प्रकार के प्रशिक्षणों के लिए आवश्यकता इस बात की है कि हम प्रशिक्षकों के लिए प्रशिक्षण का फिर से ताना–बाना बुनें।

यहां यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि पूरे देश में जितनी भी ग्रामीण विकास संबंधी संस्थाएं हैं वे एक दूसरे के क्रियाकलापों से अवगत नहीं है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन संस्थाओं में आपसी नेटवर्किंग की जाए ताकि शोध एवं प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक दूसरे की प्रतिपूरक साबित हो सकें। फिर यह भी जरूरी है कि विभिन्न स्तर के कर्मियों के लिए अलग–अलग प्रशिक्षण आवश्यकताओं का विश्लेषण किया जाए तथा पूरी देश में समय एवं वातावरण के अनुसार उनके लिए अलग से प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए। पाठ्यक्रम घिसे–पिटे न होकर विकासोन्मुख हों और समय–समय पर पाठ्यक्रम में भी बदलाव किया जाए।

प्रशिक्षण का ही एक हिस्सा यह भी होना चाहिए कि देश के एक क्षेत्र के जनसेवी देश के दूसरे भाग में जाकर वहां की विकास योजनाओं को देखें तथा उनकी खूबियों को अपनाने की कोशिश करें।

अभी तक हमारी प्रशिक्षण रणनीति इस कारण भी ज्यादा सफल नहीं रही है क्योंकि हमने जो प्रशिक्षण पाठ्यक्रम तैयार किए वे पूर्व निर्धारित कल्पना के आधार पर हैं, जो कि कभी भी प्रभावकारी नहीं हो सकते। अतः आवश्कयता इस बात की है कि प्रशिक्षण पाठ्यक्रम राज्यों, जिलों, खण्डों के प्रतिनिधियों एवं कर्मियों की अलग–अलग आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर तैयार किए जाएं। राष्ट्रीय स्तर पर प्रशिक्षण विशेषज्ञों की एक टीम गठित की जाये, जो कि विभिन्न प्रशिक्षण संस्थाओं में जाकर त्वरित प्रशिक्षण का मूल्यांकन करे तथा उसमें यदि त्रुटि दिखाई पड़ती हो तो उसका समाधान करने के सुझाव दे।

एक बात और भी ध्यान देने योग्य है कि कहने को तो हर राज्य में राज्य ग्रामीण विकास संस्थाएं हैं लेकिन न तो उनमें उचित मूलभूत संरचना है न प्रशिक्षक हैं। अतः राज्य ग्रामीण विकास संस्थाओं को प्रशिक्षण संबंधी मूलभूत संरचना मुहैया कराई जाए तथा उनमें पूरी संख्या में प्रशिक्षकों की नियुक्ति की जाए।

जहां तक प्रशिक्षण के प्रकारों का प्रश्न है वह विभिन्न स्तर के तथा विभिन्न तरह के कर्मियों के लिए अलग–अलग होने चाहिए साथ ही समय–समय पर उनका एक मिला–जुला प्रशिक्षण होना चाहिए ताकि वे दूसरे की समस्याओं से अवगत हो सकें और एक–दूसरे के लिए सहायक हो सकें। कम से कम त्रैमासिक अंतराल पर गांव से लेकर जिला स्तर तक के कर्मियों के समानान्तर मेलजोल संबंधी प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि यह एक ऐसा प्लेटफार्म होगा जहां पदसोपान नाम की कोई चीज नहीं होगी। ऐसे पाठ्यक्रमों में जन प्रतिनिधियों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के कर्मियों को भी शामिल किया जाना चाहिए।

प्रशिक्षण तकनीक मात्र कक्षा व्याख्यान तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए बल्कि इसका माध्यम काम करते हुए सीखना होना चाहिए, विकास कार्यस्थल होना चाहिए, केस स्टडी होना चाहिए। इसी तरह खण्ड और ग्रामीण स्तर पर विशेष बल नुक्कड़–नाटक, छोटी–छोटी डाक्यूमेंटरी फिल्मे प्रदर्शनी तथा स्थानीय भाषा में छपे साहित्य के माध्यम से होना चाहिए।

हमने पहले भी निगाह रखने वाले तंत्र की बात कही है और यहां भी हम विशेष बल के साथ कहना चाहते हैं कि पूरे देश को विभिन्न प्रशिक्षण क्षेत्रों में बांट देना चाहिए और हर क्षेत्र के लिए अलग–अलग क्षेत्रीय मानीटरिंग समिति होनी चाहिए तथा उनके ऊपर राष्ट्रीय स्तर पर अवलोकन एवं मूल्यांकन समिति होनी चाहिए जो कि न केवल प्रशिक्षण एवं प्रशिक्षण से जुड़ी समस्याओं का ही मूल्यांकन करे बल्कि ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों का भी अवलोकन एवं मूल्यांकन करे। तभी हम सही अर्थ में ग्रामीण विकास के लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं अन्यथा हमेशा की तरह हमें अपनी असफलताओं को रोना रोकर ही संतोष करना होगा। अतः जैसे ग्रामीण विकास आवश्यक है उससे कहीं अति आवश्यक है ग्रामीण विकास से संबंधित प्रशिक्षण। ❑

(पृष्ठ 4 का शेष) **मध्य प्रदेश में ग्राम–स्वराज.....**

को दिए जाने की व्यवस्था है। ग्रामसभा को करारोपण के अधिकार भी दिए गए हैं। प्रत्येक ग्रामसभा द्वारा एक कोष बनाया जाएगा। यह कोष चार भागों में विभाजित रहेगा : 1. अन्नकोष 2. श्रम कोष 3. वस्तुकोष 4. नगद कोष। ग्राम कोष की नगद राशि में अनुदान, ग्राम पंचायत को दी गई आवर्ती राशि, ग्राम सभा द्वारा लगाए गए करों से प्राप्त राशि और केंद्र व राज्य सरकार की योजनाओं के अंतर्गत ग्राम सभाओं को आवंटित राशि शामिल है। ग्रामकोष की व्यवस्था की जिम्मेदारी ग्राम विकास समिति की है। आय–व्यय का पूर्ण लेखा–जोखा रखा जाएगा तथा इसमें पारदर्शिता के लिए आडिट की व्यवस्था है। आडिट के लिए बाहरी विशेषज्ञों की मदद भी प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्ष

ग्राम–स्वराज व्यवस्था म.प्र. सरकार द्वारा ग्राम विकास के लिए प्रारंभ की गई एक अभिनव पहल है जो कि हमारे संविधान में निहित गणतंत्र की लोकोन्मुखी भावनाओं का विस्तार करती है तथा ग्रामीणों में 'स्वंय के साधनों से स्वयं के विकास' पर बल देती है। किंतु यहां इस बात को भी ध्यान रखना होगा कि जिन व्यक्तियों के हाथों में यह जिम्मेदारी सौंपी जा रही है (ग्रामवासी या ग्राम–सभा के सदस्य) उन्हें अपने कर्तव्यों का निर्वाह, पूर्ण ईमानदारी और सजगता के साथ करना होगा। उनसे अपेक्षा है कि वे पहले व्यवस्था को ठीक ढंग से समझें और फिर गांवों में उपलब्ध संसाधनों का पूर्ण विदोहन करने के लिए योजना बनाए। यदि योजना को ठीक ढंग से और सच्ची भावनाओं के साथ क्रियान्वयन किया गया तो मध्य प्रदेश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में तथा अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति के विकास में यह व्यवस्था 'मील का पत्थर' साबित होगी तथा अन्य राज्यों के लिए मिसाल बन जाएगी। ❑

लक्षित समूहों की भागीदारी व कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर में छिपा है गरीबी उन्मूलन का मूलमंत्र

एच. सिंह

नौवें दशक के शुरू में भारतीय अर्थ–व्यवस्था के भूमंडलीकरण की जो शुरुआत हुई थी उसने लगभग एक दशक का समय पूरा कर लिया है। इस दौरान देश के आर्थिक और सामाजिक ढांचे में बहुत से बदलाव भी आए हैं लेकिन इन बदलावों का ज्यादा फायदा शहरी वर्ग को मिला और ग्रामीण आबादी उससे लगभग अछूती ही रही है। यही वजह है कि देश में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का स्तर शहरी क्षेत्रों से अधिक बना हुआ है। यानी गरीबी रेखा से नीचे रह रहे लोगों की संख्या का प्रतिशत वहां शहरी क्षेत्रों से काफी अधिक है। यहां सबसे अधिक चिंताजनक वे तथ्य हैं जो यह साबित करते हैं कि नौवें दशक में गरीबी के घटने की गति आठवें दशक के मुकाबले धीमी हुई है। इसके साथ एक विरोधाभास यह भी जुड़ा है कि गरीबी में कमी की गति तब धीमी हुई है जब आर्थिक विकास की दर पूर्व दशकों की अपेक्षा ऊंची हो रही है।

जहां तक देश में गरीबी के आंकड़ों का सवाल है तो उनके आकलन से एक बात जरूर साबित होती है कि हमने सातवें दशक से नौवें दशक के अंत तक एक लंबा फासला जरूर तय किया है। वर्ष 1973–74 में देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 56 फीसदी लोग गरीबी रेखा से नीचे रहते थे। यानी ग्रामीण क्षेत्रों की केवल 44 फीसदी जनसंख्या उस समय गरीबी रेखा के ऊपर थी। सरकार द्वारा चलाए गए गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों और अर्थव्यवस्था में दूसरे बदलावों के चलते 1985 में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का स्तर 39 फीसदी रह गया और 1993–94 के आंकड़ों के मुताबिक गांवों में

37 फीसदी लोग गरीबी रेखा के नीचे रह गए। 1993–94 के आंकड़ों के आधार पर शहरी क्षेत्रों में गरीबी का स्तर 32.4 फीसदी और पूरे देश में 36 फीसदी रह गया। इस आधार पर कहा जा सकता है कि 1973–74 से 1993–94 के बीच गांवों में गरीबी के स्तर में लगभग 20 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई।

वर्ष 1993–94 के बाद के अधूरे आंकड़े अभी उपलब्ध हैं और इसके आधार पर नेशनल सैंपल सर्वे (एन.एस.एस.) ने 2000–2001 में ग्रामीण गरीबी का स्तर 27.6 फीसदी आंका है जबकि चालू वर्ष में गरीबी के स्तर को 16.5 फीसदी के स्तर पर लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। यह लक्ष्य आगामी वित्त वर्ष 2001–02 तक हासिल करना है जो कि इस समय लगभग असंभव लग रहा है क्योंकि एक साल के भीतर 10 फीसदी कमी किसी भी सूरत में नहीं लाई जा सकती है। खास तौर से उन तथ्यों को मद्देनजर रखते हुए जिनमें 10 फीसदी की कमी करने में हमें 1993–94 से 2000–01 तक का समय लगा।

दूसरी ओर एन.एस.एस. के 27.6 फीसदी के आंकड़े को लेकर सवाल खड़े हो गए हैं। यह स्तर केवल छह माह के आंकड़ों के आधार पर निकाला गया है और पूरे साल के आंकड़े मार्च 2001 तक ही उपलब्ध हो सकेंगे। मामले की गंभीरता को देखते हुए योजना आयोग ने इसकी समीक्षा के लिए एक कार्य दल गठित किया है।

इसके साथ ही कुछ दूसरे तथ्यों पर भी निगाह डालनी जरूरी है। आठवें दशक में सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी) की वृद्धि का औसत 5.8 फीसदी रहा था जबकि 1991–92 से अब तक की वृद्धि दर का औसत 6.3 फीसदी रहा है। इसमें 1992–93 से 1996–97 तक जी.डी.पी. की वृद्धि दर का औसत 6.5 फीसदी रहा है जबकि 1997 से 2000 के दौरान जी.डी.पी. की वृद्धि दर का औसत 6.1 फीसदी रहा है। एक महत्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि नौवें दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की सबसे अधिक विकास दर वाली 10 अर्थव्यवस्थाओं में से एक रही है। लेकिन एक विरोधाभास यह भी रहा है कि यह ऊंची विकास दर गरीबों की संख्या में कमी के मामले में अधिक कारगर नहीं रही।

अब सवाल खड़ा होता है कि सरकार के भारी भरकम प्रयासों के बावजूद गरीबी में अपेक्षित कमी क्यों नहीं आ रही है। गरीबी दूर करने के अभी तक के सरकार के उपायों में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई.आर.डी.पी.), स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (आई.आर.डी.पी. का संशोधित स्वरूप) जवाहर रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना (इ.ए.एस), इंदिरा आवास योजना और राज्य सरकारों के द्वारा चलाई गई कुछ दूसरी

इस आधार पर कहा जा सकता है कि 1973–74 से 1993–94 के बीच गांवों में गरीबी के स्तर में लगभग 20 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई।

योजनाएं शामिल हैं। जवाहर रोजगार योजना का नाम बदलकर अब जवाहर ग्राम समृद्धि योजना कर दिया गया है। लेकिन उपरोक्त योजनाओं के मूल्यांकन के बाद जो निष्कर्ष सामने आए हैं वह उत्साहवर्धक नहीं रहे हैं। इन योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए प्रशासकीय प्रबंधन काफी कमजोर रहा है और सार्वजनिक व्यय का पूरा लाभ जरूरतमंद लोगों तक नहीं पहुंच सका है। जे आर वाई के तहत किए गए व्यय ठेकेदारों के जरिए कराए जाने की वजह से स्थानीय लोगों को रोजगार देने के बजाय दूसरे स्थानों से सस्ती मजदूरी पर लोगों को लाकर काम किया गया। इसके साथ ही इसमें 11 दिन के काम का औसत आया। इसके अलावा श्रम और सामान के बीच निर्धारित मानकों के उल्लंघन के साथ बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार के मामले सामने आए। इ.ए.एस. के तहत भी इसी तरह के उदाहरण सामने आए। आई.आर.डी.पी. और इसकी सहयोगी योजनाओं का पूरा लाभ लक्षित लोगों तक पहुंचाने में सफलता नहीं मिल सकी क्योंकि जहां कई मामलों में योजना के प्रावधान अव्यावहारिक रहे वहीं सरकारी मशीनरी का काम करने का ढंग व भ्रष्टाचार इसमें बाधक बना है। हालांकि सरकार ने आई.आर.डी.पी. और जे.आर.वाई. में संशोधन किया गया है और बहुत जल्दी इन संशोधनों के बाद के परिणामों का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है।

जहां सरकार को गरीबी उन्मूलन योजनाओं की सफलता को सुनिश्चित करने के लिए इनमें आवश्यक संशोधन करने होंगे वहीं क्षेत्रवार एकीकृत रणनीति बनानी होगी। इसमें उस सबसे प्रमुख कारण को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है जो गरीबी में कमी न होने के मूल कारकों को स्पष्ट करता है। देश में सबसे ज्यादा गरीब उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा में रहते हैं। इन राज्यों की आर्थिक विकास दर का कम रहना गरीबी में कमी न होने का एक बड़ा कारण रहा है। दूसरा बड़ा कारण है कृषि विकास दर में कमी आना, इसमें विशेष रूप से खाद्यान्नों के उत्पादन की वृद्धि दर लक्ष्य से कम रही है। चालू नौवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि क्षेत्र की विकास दर का लक्ष्य 3.9 फीसदी रखा गया है लेकिन पहले तीन साल में इसका स्तर 2.7 फीसदी रहा है। यही नहीं, जहां 1999–2000 में कृषि क्षेत्र की विकास दर एक फीसदी से कम रही है वहीं चालू साल में यह ऋणात्मक हो सकती है। इसके अलावा ग्रामीण ढांचागत सुविधा जैसे सड़क व नहरों के रख–रखाव की स्थिति बहुत ही खराब बनी हुई है। नौवें दशक में कृषि मजदूरों की वास्तविक मजदूरी की वृद्धि दर भी कम हुई है। इसके अलावा शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य जैसी सामाजिक ढांचागत सुविधाओं का विकास भी धीमा रहा है। इन क्षेत्रों के लिए संसाधनों की तंगी का सबसे बड़ा कारण राज्यों और केंद्र द्वारा पांचवें वेतन आयोग को लागू करना रहा है क्योंकि इसके लिए दोनों स्तरों पर सरकारी कर्मचारियों पर भारी मात्रा में अतिरिक्त राशि खर्च करनी पड़ी है।

आगामी वर्षों में गरीबी उन्मूलन को अधिक कारगर बनाने के लिए सरकार को एक साथ दोहरी रणनीति पर अमल करने की जरूरत है। एक ओर जहां कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर को सुनिश्चित करना होगा क्योंकि यही

क्षेत्र ग्रामीण अर्थव्यस्था की रीढ़ है और इसकी समृद्धि का सीधा अर्थ है गरीबी पर प्रहार करना। दूसरे, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का पुर्नगठन करना होगा।

हालांकि इस बात को जहां अर्थविद स्वीकारते हैं कि ऊंची विकास दर गरीबी उन्मूलन का सबसे बड़ा हथिहार है वहीं प्रधानमंत्री ने भी इस बात पर जोर दिया है कि गरीबी समाप्त करने के लिए नौ फीसदी की विकास दर जरूरी है। लेकिन ऊंची विकास दर कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर के बिना संभव नहीं है। कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर के लिए सरकार को उन क्षेत्रों पर अधिक ध्यान देना होगा जहां संभावनाएं बेहतर हैं लेकिन अभी उनका दोहन नहीं हो सका है। और संयोग से यही वह क्षेत्र है जहां गरीबी सबसे अधिक है।

देश में गरीबी के लिहाज से कुछ क्षेत्र हैं और उन्हीं क्षेत्रों में कृषि विकास की व्यापक संभावनाएं भी हैं। पूर्वी भारत में पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तरी बिहार, तटीय उड़ीसा, असम, त्रिपुरा ऐसे क्षेत्र हैं जहां गरीबी बहुत है लेकिन पानी बहुतायत में है। इसलिए कृषि उत्पादन बढ़ाने की असीम संभावनाएं हैं। गरीबी के दूसरे क्षेत्रों में मध्य भारत व आदिवासी इलाके हैं। इनमें बुंदेलखंड, दक्षिणी बिहार, विदर्भ, मध्यप्रदेश, राजस्थान, पश्चिमी उड़ीसा, और तेलंगाना शामिल हैं।

सरकार को इन क्षेत्रों में जहां भूमि सुधारों को लागू करना चाहिए वहीं उत्तम बीज व कृषि की आधुनिक तकनीक लोगों को उपलब्ध कराने की जरूरत है। इसके साथ ही सिंचाई, बिजली, जल एवं भूमि प्रबंधन, सड़क और विपणन सुविधाओं जैसी ढांचागत जरूरतों पर अधिक जोर देना चाहिए। सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं, शिक्षा और आवास की जरूरतों को पूरा करने के लिए इन क्षेत्रों सहित सभी ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार को अधिक वित्तीय संसाधनों का प्रावधान करने की जरूरत है। इन उपायों के जरिये जहां लघु एवं सीमांत किसानों की आय में बढ़ोतरी हो सकेगी वहां कृषि से जुड़े दूसरे व्यवसायों में लगे लोगों के लिए रोजगार व आय में वृद्धि के अधिक अवसर प्राप्त हो सकेंगे।

> ***एक ओर जहां कृषि क्षेत्र की ऊंची विकास दर को सुनिश्चित करना होगा क्योंकि यही क्षेत्र ग्रामीण अर्थव्यस्था की रीढ़ है और इसकी समृद्धि का सीधा अर्थ है गरीबी पर प्रहार करना। दूसरे गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों का पुर्नगठन करना होगा।***

जहां तक गरीबी उन्मूलन के सरकारी कार्यक्रमों का सवाल है तो उनके प्रावधान इस तरह के होने चाहिए कि उनमें लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके। अभी तक के अनुभव यह साबित करने में सफल रहे हैं कि सरकारी नियंत्रण की बजाय लक्षित समूह की सीधी भागीदारी वाले कार्यक्रमों की सफलता जहां अधिक रही है वहां भ्रष्टाचार की संभावनाएं भी घटी हैं। हालांकि इस दिशा में स्वयं सहायता समूहों को माइक्रो क्रेडिट योजनाओं के तहत ऋण मुहैया कराने की शुरुआत हुई है लेकिन यह अभी बहुत छोटे स्तर पर है। देश में लगभग 30,000 करोड़ रुपये का संभावित माइक्रो क्रेडिट व्यवसाय है। इस संभावना का दोहन गरीबी उन्मूलन में बहुत कारगर सबित हो सकता है। ❑

परामर्श

महाराज

चादर फटे नहीं
पैर उघरें नहीं
पसारो पैर उतने ही।

बोझ बोझ बने नहीं
रीढ़ की हड्डी तोड़े नहीं
उठाओ बोझ उतना ही।

अनेक दीप किस काम के
जो जलते हैं बुझ जाने को
एक दीप काफी है
कुल दीपक बन जाने को।

फूल बनें शूल नहीं
खिलने से पहले
जाएं मुरझा नहीं
उगाओ आंगन में
बस सुमन उतने ही।

खुशियां गम में बदले नहीं
राष्ट्र समाज के लिए
घातक बने नहीं
उगाओ पौधे खुशियों के
बस उतने ही।

जो कभी बुझे नहीं
रोशन करे नाम
घर का कुल का
जलाओ एक दीप ऐसा ही।

पंचायतीराज – महिलाएं कठघरे में

राजन मिश्रा*
मंजुला मिश्रा*

विदित है कि 73वें संविधान संशोधन के अंतर्गत महिलाओं को पंचायती राज संस्थाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण, सदस्य तथा अध्यक्ष पदों के लिए दिया गया है जिसके कारण पंचायतों में तीनों स्तरों अर्थात् ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत/पंचायत समिति और जिला पंचायत में महिला प्रतिनिधियों की संख्या लगभग 11 लाख है। इनमें से लगभग 2.50 लाख महिलाएं अनुसूचित जाति व जनजाति की हैं। 73वां संवधिान संशोधन 24 अप्रैल, 1993 को लागू हुआ था। इस दिवस को प्रत्येक वर्ष सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली "महिला राजनैतिक सशक्तिकरण दिवस" के रूप में मनाता आ रहा है। 73वें संशोधन में महिलाओं को अधिकार प्रदान करने की घोषणा पंचायतों के इतिहास में मील के पत्थर के समान है। पंचायतों में महिलाओं की सहभागिता अनिवार्य हो गई है, परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विधान बनाने मात्र से समाज में बदलाव नहीं लाया जा सकता है।

महिलाओं के लिए आरक्षण की घोषणा की प्रारम्भिक प्रतिक्रिया एक तरफ उल्लास प्रदान करने वाली है, तो दूसरी तरफ घबराहट और चिंता वाली भी। सबसे बड़ी समस्या, पंचायत के तीनों स्तरों के लिए चुनाव के समय तक 7.95 लाख महिलाओं को खोजने की थी। ऐसी परिस्थिति में पुरुष–प्रधान समाज में महिलाएं पुरुषों के आदेश, निरीक्षण तथा प्रतिनिधि के रूप में कोरे कागज पर अपने हस्ताक्षर करेंगी, या अंगूठा लगाएंगी, परिणाम होगा महिलाएं कानून के दलदल में फंसती चली जाएंगी।

* राजन मिश्रा प्रवक्ता – समाजशास्त्र, एस.आर.के. (पी.जी.) कालेज, फिरोजाबाद
* मंजुला मिश्रा प्रवक्ता – शिक्षा विभाग, डी.डी. (पी.जी.) कालेज फिरोजाबाद

1991 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता दर पुरुषों के 64.21 प्रतिशत की तुलना में 39.29 प्रतिशत थी, जबकि पंचायत में आरक्षण 33 प्रतिशत है। किंतु मात्र साक्षरता, पंचायत को विकास कार्य में प्रयोग करने के लिए एक दुर्लभ यंत्र है जो महिलाओं को सलाखों के पीछे भेजने का सरल मार्ग भी हो सकता है। आज महिलाओं को पंचायत सदस्य बनाने के लिए प्रोक्सी की आवश्यकता है। जो "प्रोक्सी" उनका पति होता है। प्रायः ऐसा

आज महिलाओं को पंचायत सदस्य बनाने के लिए 'प्रोक्सी' की आवश्यकता है। जो 'प्रोक्सी' उनका पति ही होता है। प्रायः ऐसा भी देखा गया है कि पति अपनी पत्नी की छाया बनकर राजनीति करते हैं। लेकिन जब कभी 'प्रोक्सी' कोई राजनैतिक दल या नेता है तो महिला प्रतिनिधि का रिमोट कन्ट्रोल उस 'प्रोक्सी' के पास रहता है।

भी देखा गया है कि पति अपनी पत्नी की छाया बनकर राजनीति करते हैं। लेकिन जब कभी "प्रोक्सी" कोई राजनैतिक दल या नेता है तो महिला प्रतिनिधि का रिमोट कन्ट्रोल उस "प्रोक्सी" के पास रहता है जिसका परिणाम भ्रष्टाचार तथा भ्रष्टाचार के कारण महिला सदस्यों का कानून में उलझना होता है।

पंचायतों में महिलाओं के लिए एक तिहाई स्थान, पंचायत समितियों और जिला परिषदों के अध्यक्षों के पदों की संख्या के कम से कम एक तिहाई पद भी महिलाओं के लिए आरक्षित हो गए हैं। यह धारणा है कि पंचायतों में महिलाओं को स्थान आरक्षित करना निरर्थक सिद्ध हुआ है। वे चुनकर तो आ गई हैं लेकिन उन्हें अपने विचार रखने का अधिकार नहीं है, वे वही करेंगी जो पुरुष चाहते हैं। अधिकांश महिलाएं अकुशल हैं, उन्हें पंचायतों के विषय में कोई जानकारी नहीं है। पत्नी के बदले उनके पति सब कार्य करते हैं, महिला सरपंच अपना हाथ उठाकर मौन स्वीकृति देती हैं। गांव में महिलाएं अभी भी घूंघट निकालकर चलती हैं, बैठक में पत्नी के साथ पति आकर बोलता है। पंचायत सदस्या, अशिक्षित होने के कारण वे अपने अधिकार और दायित्वों को नहीं जान पाती हैं।

अरुणा राय, जो किसान मजदूर संगठन से जुड़ी हैं, ने राजस्थान के अपने अनुभव बताए। उन्होंने बताया कि जन सुनवाई के दौरान अनेक सरपंचों ने घोटाले में जो पैसा गबन किया था, वह वापिस किया। जो महिला तथा पुरुष पंचायतों के सदस्य तथा सरपंच बन गए, उनके सोचने का ढंग ही बदल गया। वे जो पहले पंचायतों से हिसाब मांगते थे, अब खुद हिसाब नहीं देते।

उड़ीसा में सुंदरगढ़ जिले के कुतरा – पंचायत की एक महिला उपसरपंच बासमती बारा ने यह शिकायत की कि पंचायत मंत्री ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया। अनेक स्थानों पर महिला प्रतिनिधियों की जागरूकता दिखाने या अधिकारों के प्रति उत्सुकता दिखाने के कारण प्रताड़नाओं और अपशब्दों का सामना करना पड़ता है। हरियाणा के कच्छरली गांव (पानीपत के पास) में दलित महिला सदस्य, जिंदन बाई को पुलिस की मार तथा गालियां मिलीं जब वह एक जमीन के सौदे के बारे में पूछताछ कर रही थी। मध्य प्रदेश में भिंड जिले के हरपुरा गांव में एक महिला के दोनों हाथ तोड़ दिए गए थे। राजस्थान के जयपुर जिले के बस्ती ब्लाक की साथिन भंवरी के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया। सलहौना गांव की द्रोपदी बाई को सरइया बी.डी.ओ., जिला रायगढ़ के सामने निर्वस्त्र किया गया। महिला प्रतिनिधि के शोषण को रोकने के लिए आवश्यक है कि उनके व्यक्तित्व को निखारा जाए, उनका चहुंमुखी विकास करके कानूनों के बारे में उनका ज्ञान बढ़ाया जाए। एक पक्ष कहता है कि महिला प्रतिनिधियों को भ्रष्टाचार में फंसाया जा रहा है, जबकि दूसरा पक्ष यह कहता है कि महिला प्रतिनिधि अपने व्यक्तित्व में कमी के कारण भ्रष्टाचार में फंसी रही हैं। किंतु निष्कर्ष यह आता है कि ये महिलाएं कठघरे में खड़ी हैं।

मध्य प्रदेश में 1,350 से अधिक महिलाएं भ्रष्टाचार में विभिन्न मामलों में घिरी हुई हैं। उन्होंने केवल अंगूठा लगा दिया, वास्तविकता यह है कि स्वार्थ अपना हो या पराया, परिणाम महिला प्रतिनिधियों को ही भुगतना पड़ रहा है। राजनीति के गलियारे से होती हुई, न्यायालयों की चोखटों से होकर जेल में उनके पहुंचने का खतरा बढ़ रहा है।

यह धारणा है कि पंचायतों में महिलाओं को स्थान आरक्षित करना निरर्थक सिद्ध हुआ है। वे चुनकर तो आ गई हैं लेकिन उन्हें अपने विचार रखने का अधिकार नहीं है, वे वही करेंगी जो पुरुष चाहते हैं।

उपलब्ध तथ्यों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अधिसंख्य निर्वाचित जनप्रतिनिधि या तो कम पढ़े लिखे या मात्र साक्षर हैं। ऐसी स्थिति में प्रशिक्षण देने के तरीके पर भी विशेष ध्यान देना होगा ताकि विषय वस्तु का महत्व खोए बिना उनकी समझ उन तक पहुंच सके।

चूंकि पंचायतों में महिलाओं और पुरुषों को साथ–साथ ही काम करना होता है, अतः महिलाओं और पुरुषों को प्रशिक्षण साथ–साथ ही दिया जाना चाहिए। इसमें महिलाओं और पुरुषों के बीच आपसी समझ विकसित हो सकेगी।

यह सत्य भी स्वीकार करना होगा कि पंचायती राज के माध्यम से महिलाओं के लिए जो सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त हुआ है वह निश्चित ही हमारे सामाजिक–आर्थिक विकास के मार्ग की बाधाओं को दूर करेगा। परन्तु इसके लिए हमें इस दिशा में महिलाओं के चहुंमुखी विकास की जरूरत है जिसके लिए स्वयंसेवी संगठनों को आगे आकर समाज में जागरूकता की मशाल जलानी होगी। ❑

गुजरात में भूकंप के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में पुनर्वास महाअभियान

शैलेष व्यास

इस वर्ष भारत के गणतंत्र दिवस पर आए विनाशकारी भूकंप में गुजरात के ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे ज्यादा विनाश हुआ है। भारत की 74 प्रतिशत आबादी गांवों में बसती है, इस आबादी में से 80 प्रतिशत अपने जीवनयापन के लिए कृषि पर निर्भर है। गुजरात में भूकंप से सबसे ज्यादा प्रभावित कच्छ जिले में 200 गांव पूरी तरह नष्ट हो गए हैं। कुल 400 गांवों का यह सीमावर्ती जिला 45,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल के साथ देश का दूसरा सबसे बड़ा जिला है। कच्छ के ग्रामीण क्षेत्रों में कोई भी छोटी या बड़ी औद्योगिक इकाई नहीं है। सीमावर्ती गांवों, खावड़ा, घोरडी, गोरेवाली तथा एशिया के सबसे बड़े चारा उगाने वालों क्षेत्रों के गांवों में भूकंप से भारी तबाही हुई है। इन गांवों में आर्थिक आय सिर्फ पशुपालन या हस्तकला के माध्यम से होती है। कच्छ में 12 लाख की मानव आबादी के अलावा 14 लाख से भी ज्यादा पालतू पशुओं की संख्या है।

गुजरात सरकार ने भूकंपग्रस्त ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 5,000 करोड़ रुपये के पुनर्वास पैकेज की घोषणा की है जिसमें 300 गांवों को फिर से बसाने का निर्णय लिया गया है। इन 300 गांवों

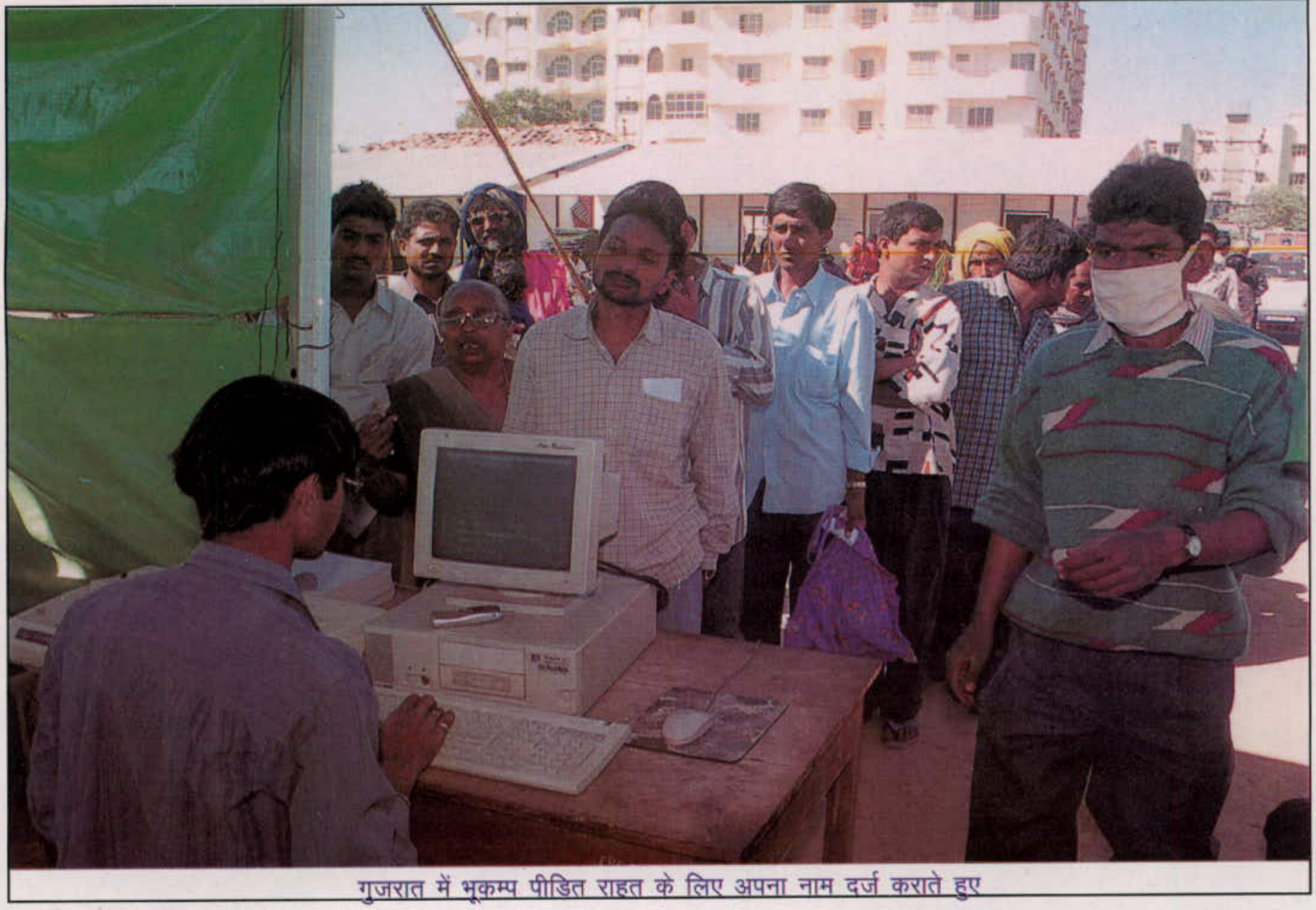

गुजरात में भूकम्प पीड़ित राहत के लिए अपना नाम दर्ज कराते हुए

में सबसे ज्यादा 172 गांव कच्छ जिले में हैं। राजकोट में 25, जामनगर में 19 तथा सुरेन्द्रनगर जिले के 13 गांवों को इस महत्वाकांक्षी पुनर्वास योजना में समाविष्ट किया गया है। इन सभी गांवों के लिए 700 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे जिसमें गांवों की जमीन, मूलभूत आवश्यकताएं, पीने का पानी, स्वास्थ्य सुरक्षा, शिक्षा, सड़क, इत्यादि शामिल है।

केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री श्री एम. वेंकैया नायडू ने भूकंपग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया। श्री नायडू तथा केन्द्र के भारी उद्योग राज्य मंत्री और राजकोट के सांसद डा. वल्लभभाई कठेरिया ने भूकंपग्रस्त जूनागढ़ जिले के उना, कोडीनार तथा आसपास के गांवों में गए। इन दोनों मंत्रियों और ग्रामीण विकास मंत्रालय के उच्च अधिकारियों ने कच्छ में भुज, भयाउ, अंजार, गांधी धाम के आसपास के गांवों में जाकर पता लगाया कि लोगों को किस प्रकार की सहायता की आवश्यकता है।

राजकोट तथा जामनगर के गांवों में ग्रामीण विकास मंत्रालय की ओर से इन गांवों के दस हजार परिवारों को प्रति परिवार 10 हजार रुपये की नकद सहायता देने की घोषणा की गई। श्री वेंकैया नायडू ने ग्रामीण विकास मंत्रालय की ओर से भूकंप पीड़ित गांवों में जल आपूर्ति के लिए 100 करोड़ रुपये की विशेष सहायता देने का वचन दिया।

केन्द्र तथा राज्य सरकार ने स्वयंसेवी संस्थाओं की मदद से पुनर्वास का विराट कार्य शुरू कर दिया है। सिर्फ राजकोट जिले में 100 से भी ज्यादा गांवों को स्वयंसेवी और धार्मिक संस्थाओं ने दत्तक लेने का निर्णय लिया है।

सरकार तथा इन संस्थाओं ने 100 परिवार वाला एक गांव बसाने में एक करोड़ रुपये की लागत वाली योजना साकार करने का कार्य शुरू कर दिया है। इस योजना के तहत एक गांव में 30 वर्गमीटर जमीन पर ईंट का मकान, अेस्बेस्टोज की छत, रसोई छत, टायलेट इत्यादि सुविधा प्रदान की जाएगी। ये मकान भूकंप से सुरक्षित होंगे। इन सभी मकानों में एक माह तक चलने वाला राशन, चारपाई, कम्बल इत्यादि आवश्यक वस्तुएं भी दी जाएंगी।

गुजरात सरकार की राज्य आपदा प्रबंधन समिति की बैठक में किए गए निर्णयों के अनुसार जो स्वयंसेवी संस्थाएं गांवों का पुनः निर्माण करना चाहती हैं उनको कुल खर्चे का 50 प्रतिशत सरकार की ओर से दिया जाएगा।

इस कार्य के लिए राज्य के सभी जिलों में पुनर्वास सलाहकार समितियां गठित की गई हैं जिनकी अध्यक्षता संबंधित जिले के कलेक्टर करेंगे। ग्रामीण विकास तथा सामाजिक विकास के 30 गण्यमान्य व्यक्तियों को इनमें शामिल किया गया है।

गुजरात की इस त्रासदी में सहभागी होने के लिए देश के कोने–कोने से स्वयंसेवी संस्थाओं ने अपना कार्य शुरू कर दिया है। कच्छ जिले के दूर–दराज ताल्लुकों में पंजाब के सिख समुदाय की ओर से न सिर्फ लंगर लगाया गया बल्कि अस्थायी आवास के लिए टेन्ट दवाइयां, कम्बल इत्यादि इस क्षेत्र के गांवों में वितरित किए गए।

नई दिल्ली की स्वाभिमान संस्था ने अंजार तालुका के दुघई गांव को दत्तक ले लिया है। दिल्ली के पूर्व मुख्यमंत्री श्री साहबसिंह वर्मा की अध्यक्षता में स्वाभिमान संस्था ने दुघई का नया नाम इन्द्रप्रस्थ रखकर वहां 800 मकान बनाने का काम शुरू कर दिया है।

गुजरात में इस विनाशकारी भूकंप में 8 लाख मकान बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुए हैं। 8,000 गांवों पर बुरा असर पड़ा है, 50 लाख से भी ज्यादा लोगों ने अपने घर मकान गवां दिए हैं। इस महामारी में सरकार के साथ धार्मिक और स्वयंसेवी संस्थाएं कदम से कदम मिलाकर लोगों का मनोबल बढ़ाकर फिर से रोजमर्रा की जिंदगी शुरू करने के लिए प्रोत्साहित कर रही हैं।

स्वतंत्र भारत की सबसे बड़ी प्राकृतिक आपदा के बाद भी व्यापार और उद्योग में विश्व भर में अग्रणी माने जाने वाले गुजराती समुदाय का मनोबल टूटा नही है। एक जबरदस्त आत्मबल और गुजरात की अस्मिता का दर्शन भूकंप के बाद कई तरह के पुनर्वास और राहत कार्यों में देखने को मिला है। अब फिर से गुजरात को उठाना है। गुजरात के जो गांव भूकंप में नष्ट हो गए हैं वहां फिर आशा का संचार सामाजिक गतिविधियों का प्रारम्भ केन्द्र सरकार, राज्य सरकार तथा कई स्वयंसेवी संस्थाओं की मदद से होना शुरू हो गया है। गुजरात के लोग इस बात को निश्चित रूप से मानते हैं कि उनका मनोबल किसी भी प्राकृतिक आपदा में टूटने वाला नहीं है चाहे वह अकाल हो या फिर भूकंप।

गुजरात के गांव नए सिरे से उठकर देश के विकास की मुख्यधारा में जल्दी ही सम्मिलित हो जाएंगे। ❑

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिए। रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए। जिन रचनाओं के साथ ऐसा प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण विकास मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजें।

— सम्पादक

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का योगदान

इन्दु शेखर व्यास

आधुनिक युग में किसी भी देश की अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार वहां की बैंकिंग प्रणाली होती है। स्वतंत्रता के पश्चात् हमारे देश के नीति–निर्धारकों ने जब अर्थतंत्र को मजबूत करने के बारे मे सोचा तो उन्होंने बैंकिंग उद्योग को सुदृढ़, सुलभ तथा व्यापक बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया। इसलिए 1967 तथा 1969 में चौदह मुख्य वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। साथ ही उन पर कृषि तथा कृषि से सम्बन्धित क्रिया–कलापों के लिए दिए जाने वाले ऋणों में वृद्धि करने की जिम्मेदारी डाली गई। परन्तु, पांच वर्ष बाद यह पाया गया कि राष्ट्रीयकरण और सरकारी बाध्यता के बावजूद बैंक ग्रामीणों, विशेषकर कमजोर तबकों के लोगों, तक नहीं पहुंच पाए। इसलिए ग्रामीण अर्थतंत्र को मजबूत करने के लिए एक अलग संस्था की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की गई जो केवल ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों के वित्त पोषण का कार्य कर सके। साथ ही जिनका ध्यान मुख्य रूप से लक्ष्य समूह तथा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों पर केंन्द्रित हो। इसी बात को मद्देनजर रखते हुए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई। ग्रामीण बैंकों की स्थापना मुख्य रूप से निम्नलिखित दो उद्देश्यों को ध्यान में रखकर की गई।

- ऐसे शिक्षित ग्रामीण युवकों को रोजगार प्रदान करना जिनका रुझान ग्रामीण क्षेत्र का विकास करने में है।
- राज्य सरकार/स्थानीय निकायों के कर्मचारियों के समान वेतनमानों और भत्तों पर ग्रामीण बैंक कर्मियों को नियुक्त कर ग्रामीण बैंक की लागत कम रखना।

भारत सरकार द्वारा गठित कार्यकारिणी दल की सिफारिशों के आधार पर 26 सितम्बर 1975 को *क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक* अध्यादेश जारी किया गया। उसी के अन्तर्गत देश में सर्वप्रथम 2 अक्तूबर 1975 को पांच क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित किए गए। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की निर्गमित एवं प्रदत्त पूंजी 25 लाख रुपये रखी गई, जिसे बाद में बढ़ाकर एक करोड़ रुपये कर दिया गया जिसमें भारत सरकार, राज्य सरकार तथा प्रायोजक बैंक पूंजी का अनुपात क्रमशः 50 प्रतिशत, 35 प्रतिशत तथा 15 प्रतिशत रखा गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रबन्धन निदेशक मंडल (Board of Directors) द्वारा किया जाना तय किया गया जिसमें भारत सरकार, राज्य सरकार, नाबार्ड, रिजर्व बैंक तथा प्रायोजक बैंक के सदस्यों को मिला कर मण्डल का गठन किया गया। बैंक का अध्यक्ष प्रायोजित बैंक द्वारा नियुक्त किया जाना तय किया गया।

ग्रामीण बैंकों की प्रारम्भिक सफलता को देखकर धीरे–धीरे पूरे देश में ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई। आज पूरे देश में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे हैं जिनकी चौदह हजार से अधिक शाखाएं विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं।

प्राथमिकता वाले क्षेत्र

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ऋण देने में ग्रामीण क्षेत्र के लघु और सीमान्त कृषकों, कृषि श्रमिकों, कारीगरों, लघु उद्यमियों, छोटे व्यापारियों तथा छोटे उद्योगों को प्राथमिकता दी जाती है। सामान्यतया इन बैंकों द्वारा लक्ष्य समूह के अन्तर्गत ही ऋण वितरण किया जाता है। ग्रामीण बैंकों की प्रारम्भिक सफलता को देखकर धीरे–धीरे पूरे देश में ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई। आज पूरे देश में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे हैं जिनकी चौदह हजार से अधिक शाखाएं विभिन्न ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक पिछले पच्चीस वर्षों से देश के विभिन्न ग्रामीण बैंकों में बैंकिंग सेवाएं दे रहे हैं तथा समाज के कमजोर वर्ग को संस्थागत ऋण उपलब्ध करवा रहे हैं। प्रायोजक बैंकों और नाबार्ड की पुर्नवित्त योजनाओं के माध्यम से इन बैंकों ने ऋण के प्रवाह को शहरी क्षेत्रों से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़ा है जो हमारी ग्रामीण पृष्ठभूमि को देखते हुए महत्वपूर्ण है। परन्तु अपनी उपलब्धिपरक सेवाओं के बावजूद ग्रामीण बैंकों की स्थिति दयनीय होती गई। 31 मार्च 1994 तक कुल हानि 1,300 करोड़ के लगभग थी जो कि 162 बैंकों की शेयर पूंजी और प्रारक्षित निधियों को पूर्ण रूप से निगल गई। 1994 में वर्ष 196 में से 171 बैंक घाटे में थे तथा शेष 25 बैंकों का लाभ भी बहुत सीमित था। यही नहीं, ग्रामीण बैंक कर्मियों ने न्यायालय के माध्यम से "समान काम हेतु समान वेतन व्यवस्था" के अन्तर्गत वाणिज्यिक बैंकों के बराबर वेतन भत्ता का निर्णय अपने पक्ष में प्राप्त किया जिससे स्थापना के समय कम लागत की इन बैंकों की व्यवस्था स्वतः समाप्ति की ओर अग्रसर हुई। यही नहीं, नब्बे के दशक के

पूर्वार्द्ध में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक वित्तीय खतरे में पड़ गए और इनके पुनर्गठन की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी।

पुनर्गठन

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की पुनर्गठन की योजना को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया गया। पहले भाग में अल्पकालिक उपाय किए जाने थे जिनका उद्देश्य ग्रामीण बैंकों के परिचालन में सुधार लाना था। दूसरे भाग में दीर्घकालीन योजना के अन्तर्गत ढांचागत और प्रबन्धन में सुधार किया जाना है।

अल्पकालिक सुधार के उपाय दिसम्बर 1993 में प्रारम्भ किए गए जिसके अन्तर्गत इन बैंकों में ऋण विविधता में वृद्धि, कार्य क्षेत्र का विस्तार तथा गैर निधि व्यवसाय प्रारम्भ किया गया। गैर लक्ष्य समूह में ऋण का प्रतिशत 40 से 60 कर दिया गया। इन बैंकों द्वारा अपनी घाटा उठाने वाली अधिकांश शाखाओं को अच्छे स्थानों पर स्थानान्तरित किया गया जिससे व्यवसाय में आशातीत वृद्धि हुई। यही नहीं, ग्रामीण बैंकों को सेवा क्षेत्र के बन्धनों से मुक्त कर व्यवसाय वृद्धि की छूट प्रदान की गई। इसके अलावा नई शाखाओं के लिए लाइसेंस प्रणाली में भी उदारतापूर्वक विचार किया जा रहा है। इन बैंकों को वाणिज्यिक बैंकों के समान गैर निधिक व्यापार करने की छूट प्रदान की गई है। ड्राफ्ट बनाना, लाकर सुविधा, बैंक गारन्टी, डाक/तार अन्तरण इत्यादि सेवाएं अब क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा प्रदान की जा रही हैं। इन सारे उपायों से ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को तो लाभ मिला ही है साथ ही इन बैंकों की लाभप्रदताएं बढ़ी हैं।

इन बैंकों के सुदृढीकरण के लिए दीर्घकालीन उपायों के अन्तर्गत विभिन्न समितियों द्वारा भिन्न-भिन्न सिफारिशें की गईं। मुख्य रूप से तीन विचार सामने आए। पहला, इन सभी ग्रामीण बैंकों को मिलाकर राष्ट्रीय स्तर पर एक भारतीय राष्ट्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना की जाए। दूसरा, विचार यह आया कि इन सभी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को इनके प्रायोजक बैंकों में मिला दिया जाए। तीसरा सुझाव यह था कि इन बैंकों को वित्तीय

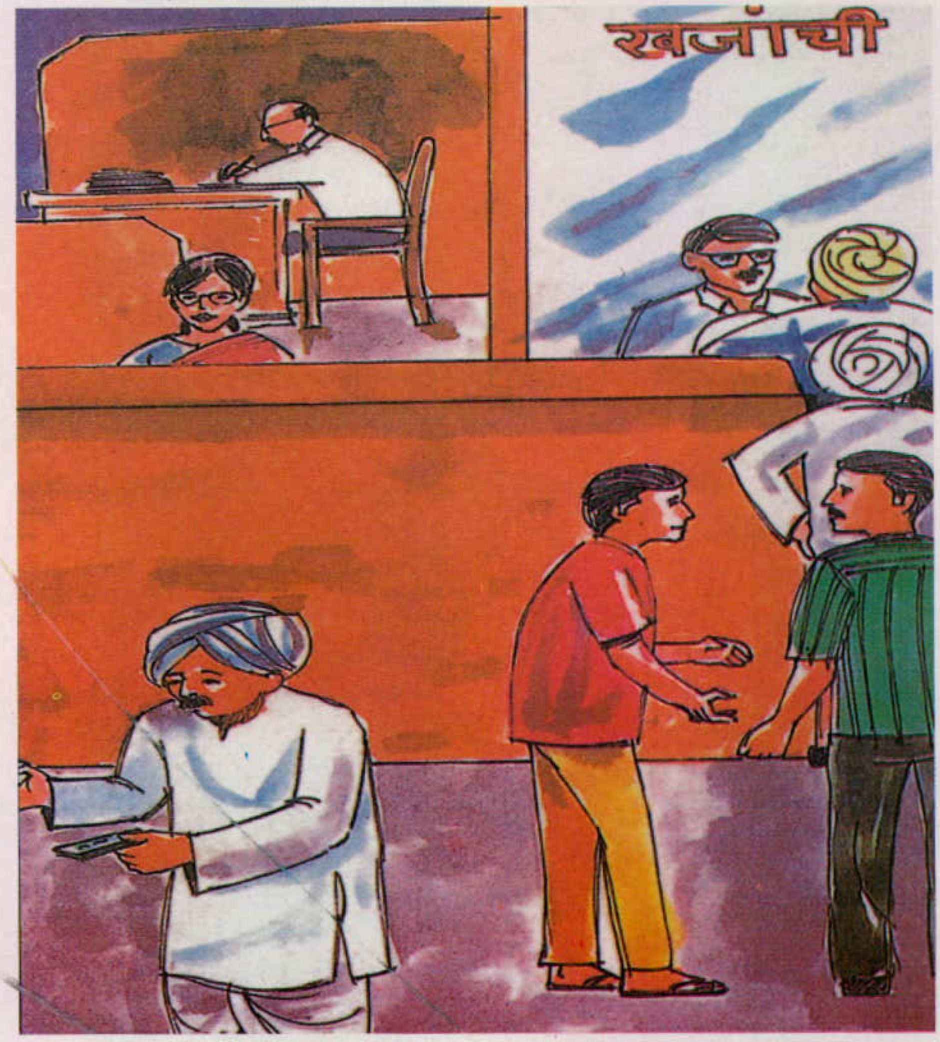

सहायता देकर इनके घाटों की पूर्ति कर इनका तुलन पत्र समायोजित कर दिया जाए। इसके साथ ही अन्य वाणिज्यिक बैंकों की तरह इन्हें सभी प्रकार के व्यवसाय करने की अनुमति प्रदान की जाए।

प्रारम्भिक दो प्रस्तावों भारतीय ग्रामीण बैंक की स्थापना तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रायोजक बैंकों में विलय को मूर्तरूप देना बड़ा कठिन लगा क्योंकि चौदह हजार शाखाओं पर नियन्त्रण, कर्मचारियों के वरिष्ठता-क्रमों का निर्धारण तथा अन्य कई कारणों को सुलझाने में बरसों लग जाते। तीसरे सुझाव पर 1994-95 से अमल किया जा रहा है। इसके साथ ही दीर्घकालीन पुनर्गठन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई है। भारत सरकार द्वारा प्रतिवर्ष इन बैंकों के लिए पुनर्गठन की राशि प्रस्तावित की जा रही है।

सर्वप्रथम 49 बैंकों के पुनर्गठन का कार्य प्रारम्भ किया गया था, जिनकी आर्थिक रूप से स्थिति कुछ ठीक थी, इसके पश्चात् प्रतिवर्ष अन्य बैंकों को इस प्रक्रिया के अन्तर्गत लाया गया है। लगभग सभी ग्रामीण बैंकों में सुधारात्मक प्रक्रिया प्रारम्भ की जा चुकी है। इसके अच्छे परिणाम सामने आए हैं। कई बैंकों की स्थिति सुदृढ़ हुई है। अधिकांश ग्रामीण बैंक लाभार्जन कर रहे हैं।

अपने प्रायोजक बैंकों के साथ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा एक समझौता करार (Memorendum of Understanding) भी किया गया है जिसमें दोनों पक्षों द्वारा कार्य निष्पादन सम्बन्धी लक्ष्यों तथा उत्तरदायित्वों का निर्धारण किया गया है। इससे प्रत्येक वर्ष में किए गए कार्यों की समीक्षा कर नए लक्ष्यों के निर्धारण में सुविधा रहती है। इस प्रकार पिछले चार पांच वर्षों से ग्रामीण बैंकों के सुदृढ़ीकरण के लिए समुचित प्रयास किए जा

रहे हैं जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था की उन्नति के लिए एक अच्छा संकेत माना जा सकता है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की आर्थिक स्थिति पूर्व अथवा वर्तमान में कैसी भी हो परन्तु जिन उद्देश्यों के लिए इनकी स्थापना की गई थी उनको काफी हद तक इन्होंने पूरा किया है। दूर–दराज के ग्रामीण क्षेत्रों तक इन बैंकों ने बैंकिग सुविधा पहुंचाई है। छोटे से छोटे व्यक्ति तक बैंकिंग सुविधा पहुंचाने का श्रेय इन्ही बैंकों को जाता है।

भूमण्डलीकरण के इस युग में सामाजिक बैंकिंग की अवधारणा बदली है। लाभार्जन मुख्य उद्देश्य हो गया है। प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। पुनर्गठन की प्रक्रिया में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भी अपनी स्थापना के समय के मूल उद्देश्यों से थोड़ा हटे हैं। इन्होंने अपनी शाखाएं शहरों तथा अर्धशहरी क्षेत्रों में भी स्थापित की हैं।

आज भी ग्रामीण तबके के लोगों की ऋण की पूर्ति इन्ही बैंकों द्वारा की जा रही है। सरकारी योजनाओं में सबसे ज्यादा ऋण वितरण इन्ही बैंकों द्वारा किया जाता है।

परन्तु आज भी ग्रामीण तबके के लोगों की ऋण की पूर्ति इन्ही बैंकों द्वारा की जा रही है। सरकारी योजनाओं में सबसे ज्यादा ऋण वितरण इन्ही बैंकों द्वारा किया जाता है।

विस्तार की संभावनाएं

पुनर्गठन की प्रक्रिया के कारण तथा कुछ सकारात्मक परिवर्तनों के कारण ग्रामीण बैंक लाभार्जन की स्थिति में आ गए हैं। परन्तु, यह स्थिति रह पाएगी अथवा नहीं इसमें संदेह है। इसके कई कारण हैं। भारत सरकार, राज्य सरकार, नाबार्ड तथा प्रायोजक बैंकों का थोड़ा–थोड़ा हस्तक्षेप होने से कई नीतिगत मुद्दों पर अनिर्णय की स्थिति रहती है। बैंक–कर्मियों को अन्य बैंकों के अनुरूप छठे वेतन समझोते के अनुरूप परिलाभ दिए जाने बाकी हैं। वेतन, परिलाभों में वृद्धि तथा एरियर भुगतान पर आने वाला व्यय बड़ा भारी है। इन बैंकों का एक दुखद पहलू और भी है। इन बैंकों में कार्य करने वाले अधिकतर कर्मचारी युवा हैं जो वेतन को लेकर इनकी स्थापना काल से ही असन्तुष्ट रहे हैं। इस युवा शक्ति का बेहतर उपयोग किया जाता सकता था। दुर्भाग्यवश पिछले पच्चीस वर्षों में इन बैंक कर्मियों का अधिकांश समय अपनी मांगें मनवाने के लिए धरनों, आन्दोलनों और हड़तालों में व्यतीत हुआ है। इन स्थितियों के कारण बैंक–कर्मियों की कार्य–क्षमता प्रभावित हुई है। यही नहीं, प्रायोजक बैंकों से आए इनके अध्यक्ष तथा ग्रामीण बैंकों में प्रतिनियुक्ति पर आए प्रायोजक बैंकों के अधिकारियों की निष्ठा अपने बैंक में रहती है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण बैंकों के प्रबन्धन वर्ग द्वारा ऐसे निर्णय लिए जाते हैं जो प्रायोजक बैंक के हित में होते हैं। अपने कार्यक्षेत्र के विस्तार के साथ इनकी प्रतिस्पर्धा अन्य वाणिज्यिक बैंकों तथा प्रायोजक बैंकों से बढ़ी है। अन्य बैंकों की तुलना में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास विविध सेवाएं दे सकने की क्षमता न हो पाने के कारण ग्राहक वृद्धि, ग्राहक सन्तुष्टि तथा व्यवसाय विस्तार कम ही हो सका है। स्थानान्तरण के बावजूद अभी भी इन बैंकों की अधिकांश शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में हैं जहां व्यवसाय की सम्भानाएं क्षीण हैं। यही नहीं, कस्बों तथा अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में इन बैंकों की शाखाएं अपने चरम बिन्दु के आस–पास पहुंच चुकी हैं। वहां भी व्यवसाय विस्तार की सम्भावनाएं कम ही हैं। इसके अतिरिक्त इन बैंकों को अलक्ष्य समूह के अन्तर्गत ऋण वितरण के अधिकार तथा अन्य कार्य करने की अनुमति प्रदान कर दी गई है परन्तु पूंजी के अभाव में इस क्षेत्र में ये कितना काम कर पाएंगे ये भविष्य ही बताएगा। अगर इन क्षेत्रों में ये कुछ आगे भी बढ़े और कुछ बड़े ऋण खाते अनुत्पादक आस्तियों में परिवर्तित हो गए तो इन बैंकों की स्थिति क्या होगी यह भी एक विचारणीय प्रश्न है जिसका हल समय रहते खोजा जाना आवश्यक है।

सुझाव

आज आवश्यकता इस बात की है कि इन बैंकों के पुनर्गठन के पश्चात् जो ढांचा तैयार होगा उसे अच्छी तरह से विकसित किया जाए। किसी एक संस्था नाबार्ड, प्रायोजक बैंक अथवा भारत सरकार को ही इन बैंकों के लिए नीतिगत निर्णय लेने के अधिकार दिए जाएं। इनकी पूंजी में वृद्धि की जानी चाहिए जैसा कि पुनर्गठन समिति ने पूंजी 200 करोड़ रुपये किए जाने का सुझाव दिया है। बैंक कर्मियों के वेतन, भत्तों तथा पदोन्नति के मसलों को भी स्थायी रूप से हल किया जाना आवश्यक है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी महत्वपूर्ण सेवाएं दी हैं तथा इससे ग्रामीण क्षेत्रों का जो विकास हुआ है वह देश की अर्थव्यवस्था के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है। यही नहीं, इन बैंकों में अधिकतर स्थानीय लोग कार्यरत हैं जिससे सरकारी योजनाएं ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को अच्छी तरह समझाई जा सकती हैं। इस बात का लाभ उठाया जाना चाहिए। इन बैंकों के सुदृढ़ीकरण के लिए सरकारी तथा निकायों

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी महत्वपूर्ण सेवाएं दी हैं तथा इससे ग्रामीण क्षेत्रों का जो विकास हुआ है वह देश की अर्थ व्यवस्था के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है। यही नहीं, इन बैंकों में अधिकतर स्थानीय लोग कार्यरत हैं जिससे सरकारी योजनाएं ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को अच्छी तरह समझाई जा सकती हैं। इस बात का लाभ उठाया जाना चाहिए।

के खातों को भी इन्हीं बैंकों में खोले जाने की बाध्यता होनी चाहिए। चौदह हजार से अधिक शाखाओं का यह जाल जो हमारे ग्रामीण क्षेत्रों में फैला है इसका अधिक से अधिक उपयोग किया जाना चाहिए, ताकि हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों का विकास हो, रोजगार में वृद्धि हो तथा प्रतिभा–पलायन को रोकने में मदद मिले। ❑

लघु एवं कुटीर उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मक चिन्ताएं

डा. जयन्ती लाल भण्डारी

लघु तथा कुटीर उद्योग रोजगार वृद्धि में अहम भूमिका अदा करते रहे हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहे जाने वाले इस क्षेत्र के उद्योगों को उदारीकरण के पदार्पण से ही गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। आटोमेटिव रिजर्व एसोसिएशन आफ इण्डिया (ए.आर.ए.आई.) के निदेशक का कथन है कि बदलते अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक परिदृश्य में जहां वैश्वीकरण जरूरी है, वहीं इसके साथ–साथ घरेलू उद्योगों को बचाना भी अत्यंत आवश्यक है। प्रतिस्पर्धा के इस माहौल में हमारे उद्योग स्वयं को स्थापित करने के साथ–साथ विदेशी कम्पनियों के सामने गंभीर चुनौती भी रख सकते हैं। उद्योगों के प्रतिनिधियों को इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की सिफारिश की गई है। साथ ही सरकार द्वारा नीतिगत फैसलों को शीघ्र मूर्त रूप दिया जाना भी जरूरी है। वर्ष 1990 से 1998 की समयावधि में हमारे देश में संगठित क्षेत्र में रोजगार सृजन बाधित था। इस दौर में लघु उद्योगों ने करीब 46.30 लाख नए रोजगार अवसरों को सृजित करके अर्थव्यवस्था को नया आयाम दिया था। आज देश की करीब 31 लाख लघु औद्योगिक इकाइयों द्वारा 7,500 से अधिक वस्तुओं का उत्पादन किया जा रहा है। देश की ये इकाइयां कुल औद्योगिक उत्पादन में 40 प्रतिशत तथा देश के कुल निर्यात में 35 प्रतिशत की भागीदारी निभा रही हैं। उल्लेखनीय है कि उद्योगों में उधारी में फंसी बैंकों की रकम में बड़े उद्योगों का हिस्सा लघु उद्योगों की तुलना में बहुत अधिक है। उद्योग सम्बन्धी समिति के अध्यक्ष के अनुसार लघु उद्योगों में बैंकों की उधारी 3,800 करोड़ रुपये की है जबकि बड़े उद्योगों के मामले में यह राशि 48,000 करोड़ रुपये की है। बड़े उद्योगों की ऐसी विवादित राशि कुल ऋण के 15 से 18 प्रतिशत के बीच है जबकि लघु उद्योगों के मामले में यह राशि 12 से 13 प्रतिशत के बीच है। उद्योग संबंधी समिति के अध्यक्ष का कथन है कि लघु उद्योगों को अधिक मात्रा में ऋण देने की आवश्यकता है। साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाए कि लघु उद्योगों को उनके दरवाजे पर ऋण सुविधा सुलभ की जाए। आज लघु उद्योगों में से सिर्फ 20 प्रतिशत को ही ऋण सुविधा मिल पाती है। बैंकों द्वारा दिए गए कुल औद्योगिक

आज देश की करीब 31 लाख लघु औद्योगिक इकाइयों द्वारा 7,500 से अधिक वस्तुओं का उत्पादन किया जा रहा है। देश की ये इकाइयां कुल औद्योगिक उत्पादन में 40 प्रतिशत तथा देश के कुल निर्यात में 35 प्रतिशत की भागीदारी निभा रही हैं।

ऋणों में इनका हिस्सा सिर्फ 15.6 प्रतिशत का है। इस हिस्से को बढ़ कर 20 प्रतिशत करने की सिफारिश किया जाना एक उचित पहल है क्योंकि रोजगार बढ़ाने और उत्पादकता को मद्देनजर रखते हुए लघु उद्योगों के योगदान को पर्याप्त अहमियत देना आज की तीव्र आवश्यकता है। फलतः इन उद्योगों को पल्लवित करने की जिम्मेदारी सम्पूर्ण देश, समाज और सरकार की है। केंद्रीय लघु उद्योग मंत्री वसुंधरा राजे ने विकासशील देशों के बीच आपसी सहयोग बढ़ाने में इन लघु उद्योग इकाइयों के बीच भी सहयोग संपर्क स्थापित करने की सिफारिश की है। फिक्की के तत्वावधान में जनवरी 2001 को विकासशील देशों के संगठन जी–15 के उद्योग व्यापार मंडलों के मंच की छठी आम बैठक को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि लघु उद्योग इकाइयों के बीच नेटवर्क स्थापित करने के दृष्टिकोण से स्माल एंटरप्राइजेज नेटवर्क प्रोग्राम की शुरुआत एक महत्वपूर्ण पहल है। दुनिया में करीब 95 प्रतिशत लघु उपक्रम विस्तारित हैं। भारत विकासशील देशों के लघु एवं मध्यम उपक्रमों में सहयोग बढ़ाने का प्रयास पहले से ही कर रहा है। उनका कहना था कि विकासशील देशों को मिलकर यह तय करना होगा कि वैश्वीकरण से उनके लिए उत्पन्न अवसरों का पूर्ण सदुपयोग हो सके तथा उसका सारा फायदा विकसित देश ही न ले लें। वर्तमान में लघु और कुटीर उद्योगों द्वारा 1.71 करोड़ लोगों को रोजगार मिला है जिससे कोई 5,27,515 करोड़ रुपये का वार्षिक उत्पादन हो रहा है। इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था में गरीब तबके की गरीबी दूर करने के उपयोगी साधन के रूप में पल्लवित हुए लघु उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका है। लेकिन इन उद्योगों को आज कदम–कदम पर कठिनाइयों से जूझना पड़ रहा है। इन उद्योगों के बुनियादी ढांचे के विकास के वित्तीय प्रावधान अपर्याप्त हैं। औद्योगिक संस्थानों की उचित देखभाल न हो पाना इन उद्योगों के लिए अभिशाप बन रहा है और देशी–विदेशी बाजारों में कड़ी प्रतिस्पर्धा ने इन उद्योगों को मृतप्रायः–सा कर दिया है। इस क्षेत्र से जुड़े ढेरों कानून और नियमों ने परिस्थितियों को और भी उलझा दिया है। उचित ऋण व्यवस्था और विपणन सुविधा का न होना इस क्षेत्र के लिए दुर्भाग्य–सा बन गया है। खादी एवं ग्रामोद्योग में कार्यरत कोई 58 लाख कारीगरों के सामने जीविकोपार्जन एक विकट समस्या बन गया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा ग्रामीण आर्थिक क्षेत्र पर धावा बोलने और कपड़ा उद्योग को आयात के लिए

खुला छोड़ देने के कारण ग्रामीण उद्योग एवं सहकारी संस्थाओं का भविष्य संकट के दौर में है। खादी ग्रामोद्योग में कोई 952 करोड़ रुपये की पूंजी का विनियोजन है। इन संस्थाओं के लगभग 250 करोड़ रुपये केंद्र और राज्य सरकारों पर बकाया हैं। वर्ष 1998–99 में खादी का उत्पादन 636 करोड़ रुपये का था जो 1999–2000 में 30 करोड़ रुपये का रह गया। खादी ग्रामोद्योग से जुड़ी ये वस्तुस्थिति गंभीर चुनौती और चिन्ता का विषय है। भूमण्डलीकरण तथा उदारीकरण के दौर ने देसी उद्योग धंधों को विकट समस्या के घेरे में डाल दिया है। महंगी पूंजी, जटिल कानून और तरह–तरह की पाबंदियां तथा पुरानी

वर्तमान में लघु और कुटीर उद्योगों द्वारा 1.71 करोड़ लोगों को रोजगार मिला है जिससे कोई 5,27,515 करोड़ रुपये का वार्षिक उत्पादन हो रहा है। इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था में गरीब तबके की गरीबी दूर करने के उपयोगी साधन के रूप में पल्लवित हुए लघु उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

मशीनरी के साथ दुनिया के सबसे उन्नत राष्ट्रों से प्रतिस्पर्धा करने की चुनौतियां हैं। घरेलू उद्योगों को राहत दिलाने के लिए सीमा शुल्क बढ़ाने की गुंजाइश से सरकार का इन्कार अलग तरह की समस्या बन गया है। वहीं सरकार द्वारा मात्रात्मक प्रतिबन्धों को हटा लेने का दौर 1980 के दशक से चल रहा है। 31 मार्च 1996 तक 6,161 उत्पादों से मात्रात्मक प्रतिबन्धों को उठाया गया। वर्ष 1999–2000 की शुरूआत तक आयात के लिए 1,905 उत्पादों पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध उठाए गए। तत्पश्चात 31 मार्च 2000 को 714 उत्पादों पर से मात्रात्मक प्रतिबन्ध हटाए गए। यद्यपि सरकार आश्वासन देती रही है कि इसका घरेलू उद्योगों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा परन्तु आज बाजार में चीन और नेपाल से आने वाले माल ने घरेलू उद्योगों को भारी हानि पहुंचाई है। आज भारत का साइकिल उद्योग संकट में आ गया है। चीनी प्लास्टिक की साइकिल बेच रहे हैं जबकि हम अभी भी धातु की साइकिलें बना रहे हैं। हर चौराहे पर कैलकुलेटर धड़ल्ले से बिक रहे हैं ये सभी आयातित हैं और इनकी कीमत 70–80 रुपये तक है। इसी तरह बहुत–सा उत्पाद नेपाल के रास्ते भारतीय बाजार में आ रहा है जिससे भारत का उत्पाद बाजार में अपनी जगह बना पाने में असमर्थ–सा हो गया है। सरकार ने विदेशी प्रौद्योगिकी और संयुक्त उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए चुनिंदा लघु उद्योग क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा को 24 प्रतिशत से बढ़ाकर 49 प्रतिशत करने पर विचार किया है। वस्त्र, चमड़ा, खिलौने, आटो, कलपुरजे, सूक्ष्म इंजीनियरिंग और हाथ के औजार सहित कुछ क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाए जाने की योजना है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की सीमा निर्यात की सीमा वाले उन्नत तकनीकी क्षेत्रों तक सीमित रखने की बात पर जोर दिया गया है। विदेशी निवेश की सीमा बढ़ाने के पीछे मुख्य मुद्दा विदेशी निवेशकों, अनिवासी भारतीयों और लघु उद्योग क्षेत्र के साथ सहभागी बड़े उद्योगों को आकर्षित करना है। आज की तारीख में कोई 812 वस्तुएं लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित हैं। मौजूदा व्यवस्था के अनुसार यदि कोई विशाल इकाई इन वस्तुओं का उत्पादन करती है तो उसे तीन वर्ष तक की अवधि तक अपने समूचे उत्पादन का 50 प्रतिशत निर्यात करना होगा। लघु उद्योग मंत्रालय ने निर्यात दायित्व 50 प्रतिशत से घटाकर 30 प्रतिशत करने का प्रस्ताव रखा है। साथ ही लघु उद्योग प्रौद्योगिकी आधुनिकीकरण कोष स्थापित है ही, एक अन्य कोष की स्थापना की सिफारिश की गई है ताकि लघु उद्योग बदलती परिस्थितियों के अनुरूप नवीन प्रौद्योगिकी को अपना कर विदेशी बाजार में प्रतिस्पर्धा कर सकने में सक्षम हो सकें।

वर्ल्ड ऐसोसिएशन फार स्माल एण्ड मीडियम एंटरप्राइजेज (वास्मे) के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में लघु, कृषि एवं ग्रामीण उद्योग को बदलते परिवेश में विकास, उत्थान एवं संरक्षण हेतु कार्यक्रम (पैकेज) लाने की बात कही गई। अर्थव्यवस्था के मौजूदा हालात में अति लघु उद्योगों को सर्वाधिक आघात पहुंच सकता है अतः इस क्षेत्र के पैरों को मजबूत करना अति आवश्यक है ताकि वे परिवर्तन की शक्तियों का मुकाबला कर सकें। इस क्षेत्र की व्यापक विविधता को मद्देनजर रखते हुए उचित कदम उठाना अति आवश्यक है। लघु उद्योग सचिव का मत है कि भारतीय उद्योग वैश्वीकरण की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है लेकिन गुणवत्ता को बढ़ाकर ही हम अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का सामना कर पाएंगे तथा आज उदारीकरण के दौर में भावात्मकता की जगह उत्पाद की गुणवत्ता बनाए रखना अहम मुद्दा है। ट्रेडमार्क 2000 का आयोजन लघु उद्योग

खादी एवं ग्रामोद्योग में कार्यरत कोई 58 लाख कारीगरों के सामने जीविकोपार्जन एक विकट समस्या बन गया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा ग्रामीण आर्थिक क्षेत्र पर धावा बोलने और कपड़ा उद्योग को आयात के लिए खुला छोड़ देने के कारण ग्रामीण उद्योग एवं सहकारी संस्थाओं का भविष्य संकट के दौर में है।

क्षेत्र की उपलब्धियों को दर्शाने के साथ–साथ आपसी सहयोग बढ़ाने व तकनीक को उन्नत करने का उचित प्लेटफार्म साबित हो सकता है जिसमें कोई देश–विदेश के 180 भागीदार शामिल होते हैं। सरकार के साथ–साथ हर क्षेत्र के विकास में जनसाधारण की भागीदारी से ही विकास की गति को बढ़ा पाना संभव है।

आयात नियंत्रण समाप्त करने से भारतीय उद्यमियों को चीन, बंगलादेश, नेपाल तथा श्रीलंका जैसे देशों के सस्ते आयात ने चिंता में डाल दिया है। उद्यमियों के साथ–साथ भारतीय श्रमिकों एवं कलाकारों के समक्ष रोजी–रोटी का सवाल खड़ा हो गया है।

चीनी निर्माता भारत में वस्तुओं की डंपिंग कर रहे हैं अर्थात् भारत में लागत से भी कम कीमत पर वस्तुएं मुहय्या करवा रहे हैं। चीन के सस्ते आयात के कारण भारत में इलैक्ट्रानिक कैपेसिटर, सूखी बैटरी, साइकिल, सिले–सिलाए वस्त्र, टायर एवं खिलौना उद्योग की बहुत–सी इकाइयां बंद होने की कगार पर आ गई हैं। जहां भारत में एक जोड़ी सूखी बैटरी की लागत सात रुपये पड़ती है वहीं चीन से मात्र 50 पैसे में आ रही है। इसी प्रकार चीनी टायर एक तिहाई से भी कम दाम पर पड़ रहा है। भारतीय वाणिज्य उद्योग महासंघ (फिक्की) तथा भारतीय उद्योग परिसंघ (सी.आई.आई.) ने इस समस्या के प्रति गहन चिन्ता अभिव्यक्त की है। वहीं वाणिज्य एवं वित्त मंत्रालयों का मत है कि भारत से चीन को निर्यात की तुलना में चीन से भारत को निर्यात की दर दो गुना कम है तथा चीन से आयात का खतरा उतना नहीं है जितना कि बखान किया गया है। भारत को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा विकासशील देशों के उत्पादकों दोनों से ही प्रतिस्पर्धात्मक दौर से गुजरना पड़ रहा है। आज भारतीय लघु औद्योगिक इकाइयों को सूचना प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल पर जोर देते हुए उत्पादन लागत कम करने और गुणवत्ता को बढ़ाने की दिशा में जागरूक होना पड़ेगा तभी अपने को इस बदलते हुए दौर से बचा सकेंगे। अप्रैल 2001 से आयात कोटे की बची हुई पाबंदियों को हटाने पर परिस्थितियां और अधिक प्रतिस्पर्धात्मक हो जाएंगी। उन परिस्थितियों से जूझने के लिए लघु औद्योगिक इकाइयों को स्वयं को तैयार करना होगा। श्रम बाजार की नई जरूरतों के मुताबिक सभी छोटे उद्योगों में केंद्रीय श्रम मंत्री डा. सत्यनारायण जटिया द्वारा शुरू किए गए कौशल प्रशिक्षण निर्माण और कौशल उन्नयन के संस्थागत प्रयत्नों को और अधिक विस्तारित करना होगा। जब अप्रैल तक बाकी वस्तुओं पर से भी आयात कोटे की पाबंदी हटा ली जाएगी, तब समस्या अधिक विकट हो जाने का खतरा है। ऐसे में सीमा शुल्क ही एकमात्र विकल्प रह जाता है हालांकि सीमा–शुल्क बढ़ाना भी सैद्धांतिक रूप से भूमण्डलीकरण की नीतियों के विपरीत है तथापि अपने देशी उत्पादों को कम कीमत वाले विदेशी उत्पादों से बचाने के लिए इस तरह के सीमा–शुल्कों की बाढ़ खड़ी कर दी जाए। केंद्र सरकार द्वारा चीन तथा नेपाल से आने वाले उत्पादों को मंहगा करने के लिए उनके प्रवेश बिंदु को बदलने पर विचार किया जा रहा है। ऐसा करना विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं होगा। प्रवेश द्वार बदल देने से इन उत्पादों का ढुलाई खर्च बढ़ जाएगा। इस तरह से देशी उत्पाद उनकी प्रतिस्पर्धा करने की स्थिति में आ जाएगा।

इसी प्रकार भारत सरकार को एंटी डंपिंग उपायों को लागू करना होगा साथ ही आयात शुल्क वसूलने के लिए वस्तु विशेष के अधिकतम मूल्य का उल्लेख करना अनिवार्य बनाना होगा। आयात–शुल्क की दीवार ऊंची करने पर तस्करी बढ़ने की प्रक्रिया को रोकने के कारगर उपाय जरूरी हैं, अन्यथा सरकार द्वारा उठाए गए सभी कदम निरर्थक हो जाएंगे।

> ***आज भारत का साइकिल उद्योग संकट में आ गया है। चीनी प्लास्टिक की साइकिल बेच रहे हैं जबकि हम अभी भी धातु की साइकिलें बना रहे हैं। हर चौराहे पर कैलकुलेटर धड़ल्ले से बिक रहे हैं ये सभी आयातित हैं और इनकी कीमत 70–80 रुपये तक है।***

विदेशी कम्पनियों के लिए भारत के बाजार खुलने से भारत का पैसा तो विदेशों में जा ही रहा है साथ ही साथ देश में रोजगार के अवसर संकुचित होते जा रहे हैं। दोनों ही तरफ से हम पिछड़ रहे हैं। इसके लिए सरकार द्वारा उचित कदम उठाने की आवश्यकता है ताकि देश को बेरोजगारी व गरीबी की मार से बचाया जा सके। इसके लिए लघु उद्योगों को नई तकनीक अपनाने के लिए जागरूक करना एवं उचित सुविधाएं मुहय्या करना आवश्यक है। राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम प्रतिवर्ष 40 सेमिनारों का आयोजन करके आने वाली चुनौतियों की चर्चा करके उसका सामना करने के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास छोटे शहरों में कर रहा है। सरकार द्वारा तकनीकी कोष की स्थापना की गई है। तकनीकी में सुधारार्थ लघु उद्योग को 12 प्रतिशत पूंजी का अनुदान दिया जा रहा है। उत्पादकों को बिना किसी रेहन के 25 लाख तक के ऋण का प्रावधान भी किया गया है। वर्तमान में कोई 25,000 लघु उद्योग इकाइयां राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम लिमिटेड (एन.एस.आई.सी) की सदस्य हैं उनके लिए उचित मार्केटिंग की व्यवस्था एन.एस.आई.सी. द्वारा की जाती है।

वास्तव में वैश्वीकरण की प्रक्रिया से लघु उद्योगों के समक्ष चुनौतियां और अवसर दोनों ही आए हैं। इसका मुकाबला करने के लिए सरकार, उद्यमियों तथा लघु उद्योगों के संगठनों को आपस में तालमेल करना होगा। वास्तव में ये उद्योग रोजगार ही नहीं आजीविका भी प्रदान करते हैं। इससे उद्यमियों या उनके कर्मचारियों को जीवनयापन करने के लिए आय प्राप्त होती है। यदि परिस्थितियां थोड़ी–सी भी प्रतिकूल हो जाएं तो ये लोग फिर से गरीबी रेखा से नीचे पहुंच जाएंगे। सरकार की बदलती नीतियों ने इन उद्योगों के अस्तित्व को गंभीरता से प्रभावित किया है। उल्लेखनीय है कि वाणिज्य उद्योग मंत्री द्वारा आश्वासन दिया गया है कि सरकार भारतीय उद्योगों को विदेशी प्रतिस्पर्धा में बराबर का अवसर उपलब्ध कराने को प्रतिबद्ध है लेकिन भारतीय उद्योगों को बचाने के लिए आयात शुल्क तभी बढ़ाया जाएगा जबकि कोई और विकल्प नहीं रह जाएगा। भारतीय बाजारों में विदेशी कंपनियों को प्रवेश देने से पहले घरेलू उद्योगों को कम लागत पर ऋण और अच्छी आधारभूत सुविधाएं मुहय्या करवा कर लागत कम करनी होगी तभी भारतीय उद्योगों को प्रतिस्पर्धा में मजबूती से खड़े होने में मदद मिलेगी। छोटे उद्योगों को उदारीकरण के वर्तमान दौर में पल्लवित करने का दायित्व सभी का है जिसके लिए हर संभव उपाय करने होंगे। स्वदेशी को महत्व देकर भी लघु कुटीर उद्योगों को नया जीवन दिया जा सकेगा। ❑

आजकल

साहित्य और संस्कृति का मासिक

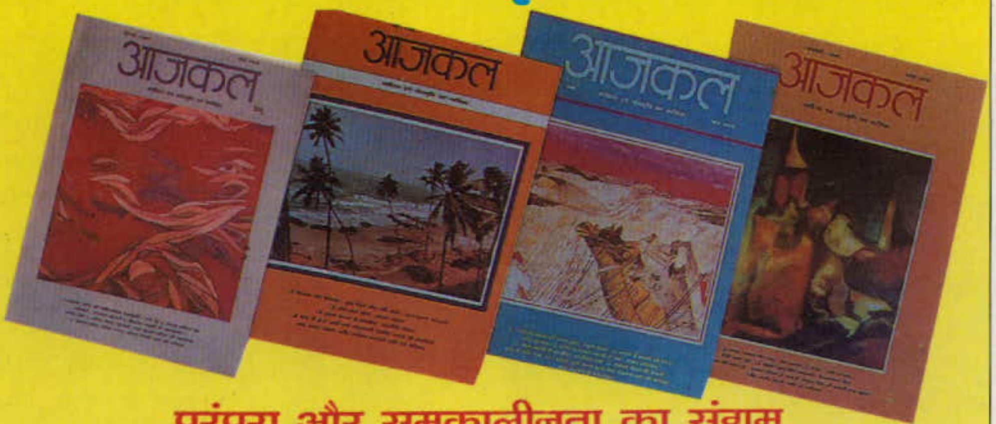

परंपरा और समकालीनता का संगम

हर महीने पढ़िए :

- साहित्य के मर्म की पहचान कराने वाले सारगर्भित लेख
- विद्वान लेखकों की विश्लेषणात्मक टिप्पणियां
- जीवन की गहराइयों को उद्घाटित करती कहानियां
- जिंदगी की मीठी-कड़वी अनुभूतियों को छूती कविताएं

अपने समाचारपत्र विक्रेता से लें या फिर नियमित ग्राहक बनें

चंदे की दरें : ☐ एक वर्ष : 70 रु. ☐ दो वर्ष : 135 रु. ☐ तीन वर्ष : 190 रु.

मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग के नाम बनवाएं और निम्न पते पर भेजें :

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक,
प्रकाशन विभाग
पत्रिका एकांश, पूर्वी ब्लाक-4 , लेवल-7,
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066, दूरभाष : 6105590

इन स्थानों पर भी उपलब्ध है

विक्रय केन्द्र : प्रकाशन विभाग ☐ पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 ☐ सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001 ☐ हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 ☐ कामर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 ☐ 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069 ☐ राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600009 ☐ बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004 ☐ प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001 ☐ 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019 ☐ राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500001 ☐ प्रथम तल, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034.

विक्रय केंद्र : पत्र सूचना कार्यालय ☐ सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.) ☐ 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003 ☐ बी-7, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर (राजस्थान)

भारत में शिशु-मृत्यु-दर: महत्वपूर्ण उपलब्धियां और कुछ चिंताएं

निरंजन कुमार सिंह

दुनिया के किसी भी देश में शिशु–मृत्यु–दर को लोगों के स्वास्थ्य और जीवन–स्तर का सर्वाधिक संवेदनशील सूचक माना जाता है। यह एक महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय घटक है जिसे प्रति 1,000 जीवित जन्म में एक वर्ष की आयु के भीतर मरने वाले कुल शिशुओं की संख्या के रूप में परिभाषित किया जाता है। भारत जैसा विशाल देश जहां जबरदस्त आंतरिक विविधताएं हैं, शिशु–मृत्यु–दर पर प्रभावी नियंत्रण एक चुनौती–भरा कार्य रहा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में तो यह चुनौती और भी गंभीर है क्योंकि यहां गरीबी, तथा निरक्षरता अधिक है और सामाजिक–सांस्कृतिक रूढ़ियां भी प्रबल रही हैं। फिर भी, सरकार के गंभीर प्रयासों और लोगों के रचनात्मक सहयोग के कारण हम इस पर कुछ हद तक प्रभावपूर्ण नियंत्रण स्थापित करने में सफल रहे हैं।

तालिका–1 से यह स्पष्ट है कि 1911–15 में भारत में शिशु–मृत्यु दर बहुत अधिक थी। उस समय देश में पैदा होने वाले 1,000 शिशुओं में से 204 जन्म के एक वर्ष के भीतर ही दम तोड़ देते थे। लेकिन प्राकृतिक आपदाओं जैसे–अकाल के कारण उत्पन्न स्थिति पर प्रभावपूर्ण प्रशासकीय नियंत्रण; चेचक, प्लेग, हैजा, मलेरिया जैसी महामारियों को बड़े पैमाने पर नियंत्रण, चिकित्सा विज्ञान में प्रगति, अच्छी स्थास्थ्य सुविधाएं जैसे–प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और अनेक उपचार केन्द्रों की स्थापना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों का प्रभाव, खाद्य आपूर्ति में सुधार, विभिन्न दिशाओं से अंतर्राष्ट्रीय सहायता और लोगों में सामाजिक जागरूकता के विकास जैसे कारणों से देश में शिशु–मृत्यु–दर में काफी कमी आई है और 1994 में यह घटकर 74 हो गई है। एक अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही है कि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में जहां 1980 में शिशु–मृत्यु–दर का अन्तर 59 था वह बाद के वर्षों में थोड़े–बहुत उतार–चढ़ाव के

तालिका–1
भारत में शिशु–मृत्यु–दर
(प्रति हजार)

अवधि वर्ष			शिशु–मृत्यु–दर
1911–1915			204
1916–1920			219
1921–1925			174
1926–1930			178
1931–1935			174
1936–1940			161
1941–1945			161
1946–1950			134
1951–1961			146
	ग्रामीण	शहरी	सम्मिलित
1970	136	90	129
1980	124	65	114
1990	86	50	80
1991	87	53	80
1992	85	53	79
1993	82	45	74
1994	80	52	74

बाद 1994 में घटकर 28 हो गया है। यह एक अच्छा संकेत है जो यह साबित करता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी लोगों के स्वास्थ्य और जीवन–स्तर के लिए गंभीर प्रयास किए गए हैं। यह प्रयास आज भी जारी हैं और आशा की जाती है कि आने वाले वर्षों में न केवल ग्रामीण और शहरी शिशु–मृत्यु–दर के अंतर में कमी आएगी अपितु अखिल भारतीय स्तर पर भी इनमें काफी कमी आने की सम्भावना है।

गम्भीर प्रयास आवश्यक

इन तमाम उपलब्धियों के बावजूद चिंता के दो प्रमुख कारण हैं। पहला यह कि विकसित देशों की तुलना में अभी भी हमारे देश में शिशु–मृत्य–दर अधिक है (तालिका–2)। इसे निम्न स्तर तक लाने के लिए अभी भी गंभीर प्रयास करने होंगे, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का अधिकाधिक प्रसार करना होगा।

चिंता का जो दूसरा कारण है वह यह है कि देश में भी क्षेत्रीय स्तर पर शिशु–मृत्यु–दर में पर्याप्त अंतर बना हुआ है (तालिका–3)। एक तरफ दक्षिण भारत का केरल राज्य है जो शिशु–मृत्यु–दर में अन्य राज्यों को काफी पीछे छोड़ते हुए लगभग विकसित देशों की श्रेणी में जा खड़ा हुआ है वहीं दूसरी ओर उड़ीसा और मध्य प्रदेश जैसे राज्य हैं जहां शिशु–मृत्यु–दर क्रमशः 98 और 97 है। अतः इन राज्यों में विशेष प्रयास करने की जरूरत है।

लेकिन इन्हीं चिन्ताओं के बीच आशा की किरण भी दिखाई देती है जिसका स्रोत भारत की तीव्र विकास दर से ढूंढ़ा जा सकता है।

तालिका–2

कुछ चुने हुए देशों में शिशु–मृत्यु–दर

देश	1900	1950	1985	1997
स्वीडन	96	22	6	4
स्वीट्जरलैंड	139	32	8	5
फ्रांस	149	53	8	5
न्यूजीलैंड	75	23	11	9
अमरीका	162	33	11	7
ग्रेट ब्रिटेन	145	33	9	6
जापान	151	60	6	4
भारत	232	127	95	72
श्रीलंका	—	77	38	14
बंगलादेश	—	159	133	75

तालिका–3

भारत के प्रमुख राज्यों में शिशु–मृत्यु–दर (1998)

राज्य	ग्रामीण	शहरी	सम्मिलित
आंध्र प्रदेश	75	38	66
असम	82	36	78
बिहार	68	51	67
गुजरात	71	46	64
हरियाणा	72	58	69
कर्नाटक	70	25	58
केरल	15	17	16
मध्य प्रदेश	103	56	97
महाराष्ट्र	58	32	49
उड़ीसा	101	66	98
पंजाब	58	40	54
राजस्थान	87	60	83
तमिलनाडु	58	40	53
उत्तर प्रदेश	89	65	85
प. बंगाल	56	41	53

स्रोतः भारत सरकार (2000), वार्षिक रिपोर्ट 1999–2000, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली।

यदि विकास की यही दर बनी रही और इसका लाभ समाज के सभी वर्गों को समुचित रूप से मिलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब भारत भी उन देशों की कतार में खड़ा हो जाएगा जहां शिशु–मृत्यु–दर इकाई में है।

एक विशिष्ट माडल का सुझाव

भारत में शिशु–मृत्यु–दर के नियंत्रण के लिए एक विशिष्ट माडल की जरूरत है। यह विकसित देशों द्वारा आजकल अपनाए जा रहे माडल से भिन्न होना चाहिए क्योंकि विकसित देश शिशु–मृत्यु–दर को बहुत हद तक नियंत्रित कर चुके हैं और अब वहां थोड़ी–बहुत शिशु–मृत्यु की जो घटनाएं हैं उसका मुख्य कारण जन्मजात विकृतियां, अनाक्सिया और हाइपाक्सिया जैसी बीमारियां हैं जबकि भारत में शिशु–मृत्यु–दर अधिक होने के मुख्य कारण संक्रमण और कुपोषण हैं। साथ ही यहां की सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियां अन्य देशों से भिन्न हैं। अतः भारत के लिए एक विशिष्ट समन्वित माडल की जरूरत है जिसमें निम्न बातें समाहित हों : पहला यह कि इसमें शिशु–मृत्यु–दर को प्रभावित करने वाले जैविक कारकों पर नियंत्रण के उपाय हों। इसके तहत निम्नलिखित बातों के लिए आधारभूत परिस्थितियां विकसित करने पर जोर दिया जाए :

- एक संतोषजनक जन्म–भार वाले शिशु की पैदाइश,
- उचित समय पर गर्भधारण (सामान्यतः 20 से 30 वर्ष के बीच)
- एक या अधिक–से–अधिक दो बच्चों वाले परिवार प्रतिमान को अपनाना,
- बच्चे का गर्भ में पूर्ण विकास और,
- निम्न प्रजनन दर।

दूसरी बात आर्थिक पहलू से जुड़ी है। आर्थिक विकास की गति और तेज की जाए ताकि शिशु को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता और उसका स्तर बढ़ाया जा सके तथा उसके पर्यावरण की प्रकृति को सुधारा जा सके। साथ ही इस बात को भी सुनिश्चित किया जा सके कि आर्थिक विकास का लाभ गरीबों तक पहुंचे।

तीसरी बात सामाजिक–सांस्कृतिक पहलू से जुड़ी है। इसके कई बातों पर ध्यान देने की जरूरत है जैसे :

- उचित समय तक शिशु को स्तनपान कराने के लिए माताओं को प्रेरित करना तथा बेटा और बेटी के जन्म के स्वागत और उनके स्तनपान में कोई भेदभाव न हो, इसके लिए जागरूकता अभियान,
- साक्षरता अभियान को सर्वोच्च प्राथमिकता,
- बड़े आकार के परिवार की जगह छोटे आकार वाले परिवार प्रतिमान अपनाने के लिए प्रेरित करना,
- उन आदिम प्रथाओं और रिवाजों के विरुद्ध एक बड़ी जंग लड़ना जो भारत में उच्च शिशु–मृत्यु–दर का एक प्रमुख कारण है, उदाहरणार्थ त्वचा को दागने की प्रथा, नाभि–नाल को काटने के बाद गोबर लगाने की प्रथा, बार–बार शुद्धिकरण की प्रथा, शिशु का आहार देने का गलत तरीका और बहुत पहले ही दूध छुड़ाने की प्रथा आदि।

इनके अतिरिक्त प्रति 100 जन्म पर एक प्रशिक्षित प्रसाविका (मिड्वाइफ) और प्रति 5,000 जनसंख्या पर एक स्वास्थ्यकर्मी की आपूर्ति तथा सुरक्षित पेयजल, स्वच्छ मकान, अच्छी निकास–प्रणाली, सक्षम आपदा प्रबंधन नीति, सामाजिक सुरक्षा आदि की समुचित व्यवस्था भी आवश्यक है। ❑

सामाजिक न्याय और भूमि सुधार अभियान

डा. विनोद गुप्ता

भारत एक ग्राम प्रधान देश है। देश की करीब 74 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है तथा खेती करती है। इस दृष्टि से भूमि सुधार कार्यक्रम का एक विशेष महत्व है। सामाजिक न्याय, आर्थिक समानता और समतावादी समाज की रचना करने हेतु देश में स्वतंत्रता–प्राप्ति के पश्चात से भूमि सुधार अभियान चलाया गया।

स्वतंत्रता के तुरन्त बाद देश में भूमि सुधार के लिए कदम उठाए गए। योजनाकारों ने भूमि सुधार नीति के उद्देश्यों को इस प्रकार निर्धारित किया कि कृषि के आधुनिकीकरण में संस्थागत तथा प्रोत्साहन सम्बन्धी बाधाएं दूर हों। साथ ही भूमि पर असमान अधिकार से उत्पन्न कृषि अर्थव्यवस्था में अन्तर को कम करना आदि भी इसका उद्देश्य था। यानी भूमि सुधार को आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण साधन स्वीकार किया गया ताकि कृषि उत्पादन में सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

भूमि सुधार बुनियादी तौर पर राज्यों का विषय है और इसको कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी भी राज्यों की है। फिर भी केंद्र सरकार इस विषय पर राष्ट्रीय नीति तय करती है और उसकी प्रगति का समय–समय पर जायजा लेती है तथा राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निर्धारित की गई नीतियों को ध्यान में रखते हुए उन क्षेत्रों की ओर संकेत करती है जिनमें सतत कार्रवाई आवश्यक है। इसलिए इस सम्बन्ध में जो कानूनी उपाय किए गए हैं और कानून बनाए गए हैं, वे प्रत्येक राज्य की स्थिति और आवश्यकताओं के अनुसार अलग–अलग हैं। सभी पंचवर्षीय योजनाओं में भूमि सुधार नीति के जो लक्ष्य निहित थे वे हैं – अतीत काल से चली आ रही भूमि व्यवस्था के कारण कृषि के विकास में जो रुकावटें आती हैं उन्हें दूर किया जाए और भूमि व्यवस्था के अन्दर होने वाले शोषण और सामाजिक अन्याय को रोका जाए। इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अनेक उपाय किए गए हैं। राज्य और खेत जोतने वाले किसान के मध्य बिचौलियों की समाप्ति से किसानों का सीधा सम्बन्ध सरकार से हो गया। इनमें बहुत से बिचौलिए तो बहुत पुराने थे और उनकी समाप्ति आधुनिक कृषि ढांचे में एक

संशोधित उच्चतम सीमा कानूनों के लागू हो जाने पर लगभग 46.20 लाख हेक्टेयर भूमि अतिरिक्त घोषित की गई। जिसमें से लगभग 44.42 लाख भूमिहीनों में बांट दी गई। इनमें से आधे से अधिक व्यक्ति अनुसूचित जातियों और जनजातियों के थे।

महान परिवर्तन का द्योतक है। इस प्रकार मध्यस्थ पट्टेधारियों के उन्मूलन से जमींदारी, इत्यादि जो कि भूमि के 40 प्रतिशत हिस्से में फैली थी, समाप्त हो गई।

लगभग सभी राज्यों ने जोत के आकार को सीमित करने के लिए कानून बना दिए हैं। जोत का आकार भूमि की किस्म के अनुसार छोटा–बड़ा होता है। सीमा से अधिक भूमि का अर्जन निषिद्ध है। सीमा से अधिक भूमि सरकार ले लेती है और समाज के कमजोर वर्गों में बांट देती है। भूमि सीमा सम्बन्धी कानूनों को 1972 में तैयार किए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों के आधार पर संशोधित किया गया। संशोधित कानूनों से पहले लगभग 11.86 लाख हेक्टेयर भूमि, सीमा से अधिक घोषित की गई, जिसमे 7.26 लाख हेक्टेयर गरीब किसानों में बांटी गई। संशोधित उच्चतम सीमा कानूनों के लागू हो जाने पर लगभग 46.20 लाख हेक्टेयर भूमि अतिरिक्त घोषित की गई। जिसमें से लगभग 44.42 लाख हेक्टेयर भूमिहीनों में बांट दी गई। इनमें से आधे से अधिक व्यक्ति अनुसूचित जातियों और जनजातियों के थे। जिन लोगों को ऐसी भूमि दी गई, उन्हें कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए वित्तीय सहायता भी दी गई। कृषि योग्य भूमि की उच्चतर सीमा निर्धारित करने के लिए कानून बनाकर उन्हें सभी राज्यों में लागू कर दिया गया।

काश्तकारों की दशा सुधारने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। उन्हें देखरेख में हस्तक्षेप के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान की गई तथा जिस जमीन को वे जोतते हैं, उस पर उन्हें स्वामित्व के अधिकार भी दिए गए। वास भूमि के काश्तकारों की बेदखली रोकने के लिए भी उपाय किए गए और अनेक राज्यों में तो इस वास भूमियों पर भी स्वामित्व के अधिकार प्रदान कर दिए गए।

आसामियों को पट्टे की सुरक्षा प्रदान करने और उनके द्वारा किए जाने वाले लगान की दरों को नियोजित करने के लिए कानूनी उपाय किए गए। सभी राज्यों में लगान की अधिकतम दरें इस प्रकार से तय कर दी गईं कि वे समग्र उपज के चौथे से पांचवे हिस्से से अधिक नहीं हो सकतीं। आसामियों को

स्वामित्व के अधिकार प्रदान करने के बारे में एक समान प्रथा नहीं है और अनेक राज्यों में अब भी रैयतवाड़ी चल रही है। जिन राज्यों में काश्त करने वाले आसामियों को स्वामित्व के अधिकार प्रदान करने की व्यवस्था है, वहां ऐसे भू–स्वामियों को छोड़ दिया गया है जो रक्षा सेवाओं के सदस्य हैं, अविवाहित स्त्रियां हैं, नाबालिग हैं, विधवा हैं या शारीरिक अथवा मानसिक रूप से अशक्तता से ग्रस्त हैं।

उत्तराधिकार के नियमों के फलस्वरूप देश में भूमि का उप विभाजन और अपखंडन बढ़ रहा है जिससे आर्थिक जोत अनार्थिक जोतों में बदलती जा रही हैं। भूमि सुधार से सम्बन्धित राष्ट्रीय नीति में आरम्भ से ही चकबन्दी की आवश्यकता पर जोर दिया जाता रहा है। देश के अधिकतम राज्यों में विशेष रूप से

प्रत्येक हिस्सेदार अपना एक ही जगह हिस्सा लेना पसंद नहीं करते हुए पारिवारिक भूमि की प्रत्येक किस्म में अपना हिस्सा लेना चाहता है। अतः प्रत्येक हिस्सेदार को न केवल छोटे–छोटे टुकड़े ही मिलते हैं, वरन वे टुकड़े काफी दूर–दूर भी होते हैं।

बड़ी सिचाई परियोजनाओं वाले क्षेत्रों में चकबन्दी के लिए कानून बनाए गए हैं। कई राज्यों में तो चकबन्दी की प्रक्रिया पूरी हो चुकी है।

कृषि प्रधान भारत में पीढ़ी दर पीढ़ी भूमि के निरंतर बंटवारे से खेतों का आकार सिमटता जा रहा है। फलस्वरूप उनकी आर्थिक उपयोगिता का ह्रास हुआ है। इस तरह की गैर लाभदायक जोतों की संख्या दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है। भूमि के बंटवारे ने खेतों के उपविभाजन की समस्या को जन्म दिया है। समस्या केवल यहीं तक सीमित नहीं है, बल्कि एक ही व्यक्ति के छोटे–छोटे खेत, अलग–अलग जगह बिखरे हुए हैं। अपखंडन की यह समस्या उपविभाजन की समस्या से भी अधिक गम्भीर है।

बढ़ती आबादी ने खाद्य तथा आवास समस्या में इजाफा करने के साथ उपजाऊ भूमि को भी अनेक छोटे–छोटे हिस्सों में बांट दिया है। नतीजतन इन छोटी कृषि जोतों की उत्पादन क्षमता गंभीर रूप से प्रभावित हुई है। ये जोतें इतनी छोटी होती हैं कि किसान खेतों में आधुनिक तौर–तरीकों के इस्तेमाल की हिम्मत नहीं जुटा पाता।

जोतों का उपविभाजन और अपखंडन यद्यपि दो भिन्न–भिन्न समस्याएं हैं, लेकिन उनके प्रभाव एक से ही हैं। उपविभाजन से तात्पर्य एक जोत के कई व्यक्तियों के बीच विभाजित होने से हैं। अपखंडन से तात्पर्य एक व्यक्ति की कुल जोत के अनेक छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित होने से है, जो एक ही जगह न होकर दूर–दूर बिखरे होते हैं। ये दोनों प्रक्रियाएं एक परिपाटी के रूप में लम्बे समय से चली आ रही हैं और इससे न जाने कितनी आर्थिक जोतों को अनार्थिक जोतों में बदल दिया है। हमारे देश में भूमि का उपविभाजन और अपखंडन प्रायः साथ–साथ पाया जाता है।

भूमि के उपविभाजन और अपखंडन का सबसे बड़ा कारण उत्तराधिकार के नियम हैं। इससे भूमि के वितरण में समानता तो अवश्य आ जाती है, किन्तु तीन–चार पीढ़ियों में ही भूमि के छोटे–छोटे टुकड़े हो जाते हैं। पिता की मृत्यु के पश्चात उसकी भू–सम्पत्ति का उसके उत्तराधिकारियों में समान विभाजन होता है। भारतीय किसान अपनी पैतृक भूमि से बहुत प्रेम करता है, जिसके कारण वह अपनी पैतृक भूमि में से, चाहे उसे छोटा–सा टुकड़ा ही क्यों न मिले, पाने के लिए प्रयत्नशील रहता है। प्रत्येक हिस्सेदार अपना एक ही जगह हिस्सा लेना पसंद नहीं करते वे पारिवारिक भूमि की प्रत्येक किस्म में अपना हिस्सा लेना चाहता है। अतः प्रत्येक हिस्सेदार को न केवल छोटे–छोटे टुकड़े ही मिलते हैं, वरन वे टुकड़े काफी दूर–दूर भी होते हैं। इस विभाजन का यह भी कारण है कि आज संयुक्त परिवार प्रणाली प्रायः लुप्त हो गई है। संयुक्त परिवारों के विघटन ने भूमि के बंटवारे में अपना योगदान किया है।

भूमि पर जनसंख्या का बढ़ता दबाव भी भूमि के उपविभाजन और अपखंडन के लिए उत्तरदायी है। हमारे देश का किसान भूमि को गिरवी रखकर कर्ज लेता है किन्तु कर्ज चुकाने की कोई व्यवस्था नहीं होने से भूमि का एक हिस्सा उसे बेचना पड़ जाता है। किसानों की अशिक्षा, अज्ञानता और अन्यत्र रोजगार के अवसरों के अभाव के कारण भूमि का उपविभाजन और अपखंडन बहुत बड़ी मात्रा में होता है।

भूमि के उपविभाजन और अपखंडन के अनेक दुष्परिणाम सामने आए हैं। छोटे–छोटे खेतों पर कृषि कार्य करने से लागत बहुत बढ़ जाती है और उसकी लाभदायकता समाप्त हो जाती है। आकार में बहुत छोटे खेत होने की वजह से न तो हल और बैलों का ही समुचित

यदि खेत दूर–दूर बिखरे हैं, तो उनमें अलग–अलग बाड़े लगाने और मेड़ें छोड़ने में भी अतिरिक्त व्यय होता है। बहुत सी भूमि मेड़ आदि के रूप में बेकार चली जाती है। अनुमान है कि कृषि योग्य भूमि का तीन प्रतिशत भाग मेड़ों से घिरा है।

उपयोग होता है और न ही अन्य औजारों का। कुछ खेत तो इतने छोटे आकार के होते हैं कि उन्हें ठीक से जोता या बोया नहीं जा सकता। इस प्रकार वे गैर लाभदायक जोत बन जाते हैं। कई मर्तबा उन्हें बिना जोते ही छोड़ दिया जाता है। खेती में आधुनिक तौर–तरीकों का उपयोग भी इस प्रकार संभव नहीं हो पाता। छोटे–छोटे खेतों पर ट्रेक्टरों, स्क्रेपरों, बुलडोजरों, क्रेशरों का प्रयोग बड़ा कठिन है।

यदि खेत छोटे आकार के हैं तो सिंचाई हेतु कुएं भी नहीं खोदे जा सकते हैं। यदि अन्य कुंओं से पानी लाया जाता है तो उसकी लागत अधिक बैठती है। इसके अलावा यदि खेत दूर–दूर बिखरे हैं, तो उनमें अलग–अलग

(शेष पृष्ठ 48 पर)

2वीं सदी में सहकारी प्रवृत्ति के सामने चुनौती

प्रा. देवेन्द्र पटेल,*

करीब 32,87,000 वर्ग किलोमीटर विस्तार में फैला भारत 21वीं सदी में पूरे 100 करोड़ की जनसंख्या के साथ प्रवेश किया है। सन् 1991 की जनसंख्या के अनुसार देश की 74.27 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास कर रही है। प्रति वर्ग किलोमीटर जनसंख्या की घनिष्टता 274 है और प्रति 1,000 पुरुष के मुकाबले 927 महिला का अनुपात है।

पूरे भारत में सहकारी प्रवृत्तियां भौगोलिक विस्तार के साथ जुड़ी हैं। गुजरात में सहकारी प्रवृत्ति के माध्यम से डेरी उद्योग और चीनी मिल और क्रेडिट सोसायटियों का विकास हुआ है। महाराष्ट्र राज्य में भी चीनी मिल और क्रेडिट सोसायटियों का विकास हुआ है। दक्षिण भारत में मत्स्य–पालन और वन आधारित सहकारी समितियों का विकास हुआ है। भारत में हरेक राज्य में सहकारी समितियों और संस्थानों का विकास हुआ है। आर्थिक विकास का एक बड़ा सुदृढ़ और विकासशील, परिणामोन्मुखी नेटवर्क सहकारी समितियों और संस्थानों के माध्यम से खड़ा हुआ है।

भारत में सहकारी प्रवृत्ति अनेक आरोह, अवरोह, अवरोध और समस्याओं को पार कर 21वीं सदी में प्रवेश कर रही है। देश में सहकारी प्रवृत्ति का शुभारंभ आज से 95 साल पहले 1904 में को–ऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटियों के कानून से हुआ। इसके बाद 1912, 1919, 1925 में सहकारिता के लिए कानून बनाए गए। आज भारत के सभी राज्यों में सहकारी कानून हैं। एक से ज्यादा राज्यों में काम करने वाली सहकारी समितियों के लिए भी 'मल्टी स्टेट कॉ–आपरेटिव सोसायटी एक्ट' सन् 1984 में बनाया गया है। ये सभी कानून आज के परिप्रेक्ष्य में विसंगतियों और विषमताओं से भरे हैं जिनका आज के सहकारिता के सिद्धान्त, के साथ तालमेल नहीं बैठता है। ऐसे कानूनों को तत्काल बदल कर प्रगतिशील, विकासलक्षी, लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित और कानून बनाए जाएं जो संस्थानों को स्वायत्तता और स्वतंत्रता प्रदान करें।

सफलताएं:

भारत की सहकारी समितियों ने राष्ट्रीय विकास में अहम् भूमिका निभाई है और ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के विकास में प्रंशसनीय कार्य किया है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में सहकारी क्षेत्र का हिस्सा भी प्रशंसनीय और महत्वपूर्ण है। देश के 99.9 प्रतिशत गांव और 65 प्रतिशत परिवारों को सहकारी क्षेत्र में समाविष्ट किया गया है। देश में अलग–अलग प्रकार तथा स्तर की 4.53 लाख को–ऑपरेटिव सोसायटियां कार्यरत हैं और 2.45 करोड़ लोग इनके सदस्य हैं।

* परियोजना अधिकारी, निरन्तर शिक्षा एवम् विस्तार कार्य विभाग दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत–395007

को–ऑपरेटिव सोसायटिओं की समग्र कार्य राशि 7,57,477 करोड़ रुपये है। कृषि विकास के लिए 60 प्रतिशत ऋण सहकारी सोसायटियों के माध्यम से दिया जाता है। रासायनिक उर्वरक की 30 प्रतिशत बिक्री सहकारी समितियों के माध्यम से हो रही है। आज सभी प्रकार की सहकारी समितियों द्वारा पूरे देश में सहकारी प्रवृत्ति का नेटवर्क बन गया है। इसके बावजूद नई सदी की चुनौतियों का सामना करने के लिए सहकारी संस्थानों को आत्मनिर्भर और सुदृढ़ बनाना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

21वीं सदी के आगमन की पूर्व तैयारी के रूप में सहकारी प्रवृत्ति को नया स्वरूप, नए तरीके और परिवर्तनशील बनाने के लिए निम्नलिखित कदम उठाने अनिवार्य हैं :

● **नेतृत्व** : सहकारी क्षेत्र में लोगों को सक्रिय बनने से पिछले दो शतक में सहकारी क्षेत्रों में नए परिबल और परिस्थिति का निर्माण हुआ है। इसके लिए एक्सपर्ट सलाहकार के साथ परामर्श करके निर्णय लेने की रूपरेखा तैयार करके सभी के सामने रखना अत्यंत अनिवार्य है। सभी सदस्यों को विश्वास में लेकर सर्व–सहमति से निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ना चाहिए। नेतृत्व और कार्यकताओं के लिए यह एक चुनौती है और इसका सामना करना अत्यंत आवश्यक है।

आज आराम से काम करने वाले या सप्ताह में सिर्फ एक दिन काम करने वाले कार्यकर्ताओं का समय नहीं रहा है। खुला बाजार, साहस, हाइ टेक्नोलाजी और टेकनोक्रेट तथा एक्सपर्ट की सेवाएं संचालन प्रबन्धन व्यापार में अनिवार्य हैं। अब Barefooted Managers सहकारी संस्थाओं में नहीं चलेगा। सहकारिता का सत्व, तत्व और विशिष्टताओं को संभाल कर ध्येय सिद्ध करना पड़ेगा। अब सिर्फ नाम मात्र की सहकारी संस्थाएं चलाने का कोई मतलब नहीं रहा है।

● **सहकारी कानून** : सहकारिता के सभी कानूनों में आमूल परिवर्तन करना पड़ेगा, गैरजरूरी सरकारी प्रतिबंध/अंकुश, आयात और नियति पर प्रतिबंध, अनावश्यक हस्तक्षेप को दूर करके सहकारी संस्थानों को स्वतंत्रता और स्वायत्तता प्रदान करना जरूरी हो गया है।

● **आर्थिक उपार्जन** : सहकारी प्रवृत्ति के पास आर्थिक उपार्जन के कम स्रोत और संसाधन, ज्यादा पूंजी आकर्षण और कामकाजी रकम की बढ़ोतरी ब्याज अंकुश नियंत्रण दूर करके खुले बाजार के स्तर पर काम करना पड़ेगा जिससे सहकारी संस्थानों को सहकारी सहायता, सब्सिडी, राहत, कम नियंत्रण जैसी मांग पर निर्भर न रहना पड़े। साहस तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सामने टिकने के लिए सामर्थ्य और स्वायत्तता होनी अनिवार्य है। Preferential Treatment and Priorities का समय सहकारी संस्थाओं के लिए समाप्त हो गया है। सहकारी संस्थानों और सहकारी कार्यकर्ताओं को बाजार की तकनीकों से सुसज्ज होना और होगा विकासशील प्रवृत्ति अपनानी होगी।

● **व्यवसायी प्रबंधक** : बाजार में सहकारी प्रवृत्ति को टिकाना भारतीय समाज की जरूरत है। व्यवसायी, तालीमबद्ध, कार्यकुशल, कुलेहबाज और त्वरित निर्णय लेने की क्षमता, उच्च तकनीकी, इन्फ्रोटेक्नॉजी, प्रबन्ध व्यवस्था का संपूर्ण लाभ लेकर सहकारी प्रवृत्ति को विकास प्रदान कर सकें ऐसे मैनेजर, टेकनोक्रेट्स, एक्जीक्युटीव का समय आ गया है। सहकारी प्रवृत्ति सिर्फ भावना, कर्तव्य, एवं निष्ठा पर अब नहीं चल सकेगी। सगा सम्बन्धी अथवा अन्य ऐसे किसी तरीके से बन–बैठे मैनेजर अब नहीं चल पाएंगे। समय के साथ ताल मिलाकर जनसंचार साधनों, कम्युनिकेशन्स के अद्यतन साधन और टेक्नोलाजी का प्रबन्धन तथा व्यवस्था में लाभ लेने होंगे, तभी खुले बाजार में अपना अस्तित्व रख पाएंगे। चीनी तथा डेरी उद्योग, सहकारी बैंक तथा क्रेडिट सोसायटी और अन्य सहकारी समितियों और संस्थाओं में अद्यतन टेक्नालाजी का उपयोग करेंगे तभी प्रगतिशील राह की ओर बढ़कर 21वीं सदी की मांग को पूर्ण कर पाएंगे।

● **सदस्यों की भागीदारी एवम् जागरूकता** : सहकारी प्रवृत्ति का शुभारंभ मानव से होता है। मानव सहकारी प्रवृत्ति के केन्द्र में है। लोकतांत्रिक सहकारी समिति में सदस्यों का महत्व समझकर सदस्यों को सहभागी बनाकर सच्चे स्वरूप में शुद्ध और सदस्यों द्वारा संचालित सहकारी समिति बनाई जानी चाहिए जिससे सदस्यों की भागीदारी बढ़ाने, जवाबदेही अदा करने और जरूरी सेवाएं प्रदान करने में सदस्यों द्वारा संचालित सरकारी हस्तक्षेप और नियंत्रण से मुक्त स्व–जवाबदेही वाले लोकशाही सहकारी संस्थान 21वीं सदी में कार्यरत होने चाहिए।

● **सहकारी व्यवस्था तंत्र** : भारत में त्रि–स्तरीय सहकारी प्रवृत्ति की व्यवस्था को स्वीकार किया गया है लेकिन आने वाले समय में इस व्यवस्था तंत्र की समस्याओं को समझना चाहिए। विकास और नए सहकारी कानून में कैसा परिवर्तन अनिवार्य है, उसका भी चिंतन–मनन करना चाहिए। सहकारी नियंत्रण को कम करने का विचार अच्छा है लेकिन फैडरेशन नए व्यवस्था तंत्र में कैसी भूमिका निभाएगा, कैसी सेवा प्रदान करेगा, कितने अधिकार रहेंगे और विभिन्न सहकारी समितियों के आपसी सम्बन्धों को घनिष्ठ बनाकर कैसा कार्यक्रम अपनाया जाए जिससे सहकारी प्रवृत्ति की विकास की गति तेज बने उसके बारे में विचार करना अत्यंत आवश्यक है।

● **सहकारी प्रवृत्ति को राजनीति से दूर रखना** : आज पूरे भारतवर्ष में सहकारी प्रवृत्ति को राजनीति से दूर करके, ब्युरोक्रेसी और स्वायत्तता और प्रबन्ध में व्यवसायीकरण करना अनिवार्य है। लेकिन सरकारी नियंत्रण, गैर जरूरी हस्तक्षेप, नियामक मंडल या व्यवस्थापक समिति का चुनाव लोकतांत्रिक सिद्धान्तों के आधार पर होना चाहिए। वार्षिक आम सभा और बोर्ड की नियमित तौर पर बैठक होती रहे और समितियों का आडिट नियमित हो, यह अत्यंत जरूरी है।

● **सरकारी नीति** : सहकारी समितियों के लिए केन्द्र सरकार और राज्य सरकार की नीति स्पष्ट होनी चाहिए। सहकारी संस्थान को प्रोत्साहित करना, सहायता और मार्गदर्शन प्रदान करना जरूरी है लेकिन गैर जरूरी अंकुश या नियंत्रण नहीं होना चाहिए।

21वीं सदी में सहकारी समितियों का उज्ज्वल भविष्य बनाने के लिए उन्हें प्रदूषणरहित, परिणामोन्मुखी, स्वायत्त लोकतांत्रिक और सदस्यों द्वारा संचालित बनाना चाहिए। सहकारी प्रवृत्ति का मध्यबिंदु लोकतंत्र ही है। ❑

साफाई कामगारों में मानव संसाधन विकास
इन्दौर शहर (मध्य प्रदेश) के विशेष संदर्भ में

आर.डी. गडकर

परम्परागत भारतीय समाज में एक वर्ग–विशेष को सफाई कार्य हेतु निर्देशित किया गया है। यह एक वंशानुगत कार्य है और प्रत्येक व्यक्ति जो सफाई कामगार उपजाति में पैदा हुआ है उसे यह कार्य करना पड़ता है। यह केवल पारम्परिक बंधनों तथा रूढ़िवादी नियमों के कारण ही नहीं बल्कि कुछ धार्मिक संस्तुतियों के कारण भी होता है। समाज में इस वर्ग को सबसे निम्न स्तर का माना जाता है। लोग उनके कार्य के कारण उन्हें अपने से अलग मानते हैं। यह सामाजिक न्याय को नकारने तथा पारम्परिक सामाजिक वर्गवाद को बढ़ाने की क्रिया है।

चूंकि सामाजिक प्रतिबन्धों के कारण किसी भी समाज में सामाजिक परिवर्तन और उसका विकास सामान्य रूप से नहीं हो पाता है परन्तु सफाई कार्य के सम्बन्ध में जैसा कि डा. अम्बेडकर ने कहा है कि इस कार्य में कोई प्रतिद्वन्दिता नहीं है क्योंकि इसका स्तर अति निम्न है।

समाज के उस वर्ग के बहुत से व्यक्तियों के पास अपने जीवन में विकासात्मक परिवर्तन लाने के लिए पर्याप्त साधन नहीं हैं। इस प्रकार के मानव संसाधन, जिनका कोई उपयोग नहीं है, को यदि किसी कार्य में नहीं लगाया गया तो वे जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करनें के लिए असामाजिक गतिविधियों में लिप्त होकर समाज के लिए एक बड़ी चुनौती बन सकते हैं (जयगोपाल, 1990:16)। डा. अम्बेडकर सहित सभी समाज वैज्ञानिकों, जो स्वतंत्रता, समता एवं बन्धुत्व पर आधारित नई समाज व्यवस्था के पक्षधर रहे हैं, ने मानव संसाधन विकास को विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण कारक माना है। केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने डा. बाबा साहेब अम्बेडकर के जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में सफाई कामगारों के विकास के लिए कई कल्याणकारी योजनाएं आरम्भ कीं। इसमें अभी और सुधार की आवश्यकता है।

डा. अम्बेडकर के जन्म शताब्दी वर्ष में सफाई कामगारों के सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन को आंकने के उद्देश्य से जुलाई 1989 में भारत सरकार के योजना आयोग द्वारा एक टास्कफोर्स का गठन किया गया। टास्कफोर्स ने अपनी रिपोर्ट 21 मार्च 1991 को प्रस्तुत की। रिपोर्ट में 51 लाख सफाई कामगारों का पता लगाया गया जो अनुसूचित जाति के थे और उनके पुर्नवास की अनुशंसा की। डा. बाबा साहेब अम्बेडकर की स्मृति तथा उनके सम्मान में स्थापित डा. बाबा साहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महू (म.प्र.) द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त प्रस्तुत अध्ययन द्वारा समाज के सदियों से उपेक्षित, शोषित और प्रताड़ित सफाई कामगार समुदाय पर ध्यान केन्द्रित किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य

अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य इन्दौर शहर के सफाई कामगारों में मानव संसाधन विकास के स्तर (शिक्षा, प्रशिक्षण, कैरियर व परामर्श आदि) का पता लगाना है।

अनुसंधान विधि

अध्ययन का समग्र : सफाई कामगारों की अधिकांश जनसंख्या शहरों और कस्बों में निवास करती है। क्योंकि आने वाली पीढ़ियां भी अधिकांशतयाः उसी पुराने अमानवीय पेशे को अपनाती जा रही हैं। इसीलिए परिवार के सभी सदस्यों को अध्ययन की परिधि में रखा गया है। अतः इन्दौर शहर के सफाई कामगारों के सभी परिवार अध्ययन का समग्र हैं।

निदर्शन की योजना

निदर्शन की रूपरेखा : सफाई कामगारों की सहायता से फील्ड इन्वेस्टीगेटर्स द्वारा इन्दौर शहर की 90 कालोनियों में स्थित कुल 2,047 सफाई कामगार परिवारों का पता लगाकर सूचीबद्ध किया गया। परिवारों की यह सूची हमारे अध्ययन के निदर्शन की रूपरेखा है। इसमें कुछ परिवार अपने समुदाय से अलग रहने के कारण हमारे इस अध्ययन की परिधि से बाहर भी हो सकते हैं।

लगभग 90 कालोनियों में सफाई कामगार निवास कर रहे हैं। उनमें से अधिकांश अविकसित कालोनियां हैं जिनमें पीने का पानी, ड्रेनेज सुविधा, मकानों की उचित संरचना आदि मूलभूत सुविधाएं अपर्याप्त हैं। अविकसित कालोनियों की संख्या 38 है। 28 कालोनियां ऐसी हैं जिनमें सफाई कामगारों के एक या दो परिवार ही रहते हैं। सफाई कामगारों की 12 बस्तियां विकसित क्षेत्रों में हैं तथा 12 बस्तियां ऐसे क्षेत्रों में हैं जहां जीवन की कुछ मूलभूत सुविधाएं सुलभ हैं तथा कुछ सुलभ नहीं हैं। सफाई कामगारों के कुल 2,047 परिवारों में से 1,454 अविकसित क्षेत्र में, 382 अर्ध–विकसित क्षेत्रों में तथा 165 परिवार विकसित क्षेत्रों में निवास करते हैं। 46 परिवार अपनी सुविधानुसार अलग–अलग जगह पर रह रहे हैं।

आंकड़ों के स्रोत

द्वितीय आंकड़े पुस्तकालयों तथा सरकारी समितियों से प्राप्त किए गए हैं जबकि प्रारम्भिक आंकड़े घर–घर जाकर परिवार के मुखिया तथा अन्य सदस्यों से प्राप्त किए गए हैं।

आंकड़ों के संग्रहण के साधन और तकनीक

आंकड़े एकत्र करने का मुख्य साधन साक्षात्कार अनुसूची थी। समस्या को विस्तृत रूप से समझने के लिए बड़ी संख्या में चरों का प्रयोग किया गया है। उनमें से मुख्य चर निम्न प्रकार हैं – सफाई कामगारों की तीन पीढ़ियों में शैक्षिक और व्यावसायिक गतिशीलता, शिक्षा, प्रशिक्षण तथा दिया जाने वाला परामर्श, जहां शिक्षा प्राप्त की, उस संस्थान का प्रकार, बच्चों की शिक्षा में माता–पिता का योगदान, आर्थिक गतिविधियों में सफाई कामगारों का योगदान आदि।

सफाई कामगारों में मानव संसाधन विकास

अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य सफाई कामगारों में मानव संसाधन विकास का निरीक्षण करना है। मुख्य रूप से औपचारिक शिक्षा, प्राप्त प्रशिक्षण तथा उन्हें दिए गए परामर्श आदि पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। प्रशिक्षण तकनीकी या गैर तकनीकी हो सकता है। तकनीकी प्रशिक्षण के अन्तर्गत मिस्त्री, कम्प्यूटर प्रशिक्षण, ड्राइविंग आदि तथा गैर–तकनीकी प्रशिक्षण के अन्तर्गत दुकान आदि चलाने या छोटे–मोटे उद्यमों को चलाने से संबंधित प्रशिक्षण हो सकता है। ये दोनों प्रकार के प्रशिक्षण सफाई कामगारों को उनके ज्ञान, कौशल तथा मनोवृत्ति आदि को, उनके अपने सामाजिक–आर्थिक स्तर को सुधारने तथा खुली बाजार व्यवस्था में अपनी रोजी–रोटी कमाने में किस प्रकार सार्थकता से उपयोग करें, की शक्ति प्रदान करते हैं।

भारत में अनुसूचित जाति में साक्षरता प्रतिशत 1961 में 10.27 प्रतिशत था जो 1991 में बढ़कर 37.41 प्रतिशत हो गया। 1961 में अनुसूचित जाति की महिलाओं में साक्षरता की दर अति न्यून 3.29 प्रतिशत थी, जो अब बढ़कर 23.76 प्रतिशत हो गई है अर्थात 1961–1991 के दौरान इनमें कुल 20.74 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है।

तालिका – 1

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में अनुसूचित जाति की साक्षरता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	क्षेत्र	
	शहरी	ग्रामीण
1961	21.81	8.89
1971	26.65	12.77
1981	36.60	8.48
1991	55.11	33.25

1991 की जनगणना के अनुसार मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति की संख्या राज्य की कुल जनसंख्या का 14.5 प्रतिशत है जिसका 3.2 प्रतिशत इन्दौर जिले में निवास करता है। इन्दौर जिले में अनुसूचित जाति के 63 प्रतिशत से ज्यादा लोग शहरी क्षेत्र में रहते हैं जो राज्य स्तर से अधिक है।

इन्दौर शहर (नगरपालिका/निगम का क्षेत्र) में अनुसूचित जाति के कुल परिवारों की संख्या 27,891 है और उनकी कुल जनसंख्या 1,62,496 है। हमारे सर्वेक्षण में सफाई कामगार परिवारों की कुल संख्या 2,047 पाई गई जो इन्दौर शहर की कुल जनसंख्या का 7.33 प्रतिशत है।

जहां तक शिक्षा का संबंध है मध्य प्रदेश भारत के सबसे पिछड़े हुए राज्यों में से एक है और यहां पर शिक्षा का प्रतिशत राष्ट्रीय स्तर से कम है। इन्दौर शहर के सन्दर्भ में अनुसूचित जातियों के पुरुषों में साक्षरता 65 प्रतिशत तथा महिलाओं में 36 प्रतिशत है। और जब हम सफाई कामगारों के सम्बन्ध में इन्हीं समकों को देखते हैं तो परिणाम चौंकाने वाले हैं। सफाई कामगारों में पुरुषों एवं महिलाओं में साक्षरता की यह दर क्रमशः 92 एवं 73 प्रतिशत है।

तालिका–2

सफाई कामगारों में साक्षरता (प्रतिशत)

लिंग	साक्षर	निरक्षर	कुल
पुरुष	92 प्रति.	8 प्रति.	100 (74)
महिलाएं	73 प्रति.	27 प्रति.	100 (528)

साक्षरता की यह दर अनुसूचित जाति और जनजाति से ही अधिक नहीं बल्कि अन्य सामान्य वर्ग से भी काफी अधिक है।

परिवार के मुखियाओं में मानव संसाधन विकास

अब हम परिवार के मुखियाओं तथा अन्य सदस्यों के शैक्षिक स्तर के बारे में बात करते हैं। लगभग सभी परिवारों में पुरुष ही परिवार के मुखिया हैं और घर के हर कामकाज में उन्हीं का नियंत्रण है। करीब 50 प्रतिशत से अधिक मुखियाओं ने प्राइमरी स्तर की शिक्षा प्राप्त की है। लगभग 3 प्रतिशत सदस्यों (मुखियाओं) ने स्नातक तथा 4 प्रतिशत ने अन्य प्रकार की शिक्षा प्राप्त की है।

तालिका 3

परिवार के मुखियाओं में शिक्षा की स्थिति

शिक्षा का स्तर	व्यक्तियों की संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	28	14
प्राइमरी (1–5)	59	29
सेकेन्डरी (6–8)	59	29
हाई–स्कूल (9–12)	44	21
स्नातक+	7	3
अन्य	9	4
योग	206	100

सफाई कामगार सारे इन्दौर शहर में फैले हुए हैं। उनके निवास की भौगोलिक स्थिति को उपलब्ध मूलभूत सुविधाओं के आधार पर चार भागों – विकसित क्षेत्र, अविकसित क्षेत्र, अर्धविकसित क्षेत्र, तथा वह क्षेत्र जिसमें सफाई कामगारों के एक–एक या दो–दो परिवार रहते हैं – में बांटा गया है। विकसित क्षेत्रों में भौतिक वातावरण अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा काफी अच्छा है। उपलब्ध मूलभूत सुविधाओं के आधार पर यह क्षेत्र काफी अच्छा है। लगभग 23 प्रतिशत परिवार विकसित क्षेत्रों में निवास करते हैं और 17 प्रतिशत अर्धविकसित क्षेत्रों में रहते हैं। लगभग 50 प्रतिशत परिवार अविकसित क्षेत्रों में रहते हैं जहां जीवनोपयोगी सुविधाएं नहीं के बराबर हैं तथा मकान और सड़कों की हालत भी अच्छी नहीं कही जा सकती। यदि हम परिवार के मुखियाओं के शैक्षिक स्तर की

तालिका–4

परिवार के मुखियाओं का आवासीय क्षेत्र व शैक्षिक स्तर

क्षेत्र	शिक्षा का स्तर						
	निरक्षर	1–5	6–8	9 से 12	स्नातक+	अन्य	योग
विकसित	10 (5)	20 (10)	15 (7)	39 (19)	6 (3)	10 (5)	100 (49)
अर्धविकसित	15 (5)	26 (9)	41 (14)	15 (5)	0 (0)	3 (1)	100 (34)
अविकसित	16 (18)	33 (38)	30 (34)	16 (18)	2.5 (3)	2.5 (3)	100 (114)
अन्य	0 (0)	22 (2)	45 (4)	22 (2)	11 (1)	0 (0)	100 (9)
योग	14 (28)	29 (59)	29 (59)	21 (44)	3 (7)	4 (9)	100 (206)

उनके निवास के क्षेत्रों से तुलना करें तो हम पाते हैं कि आवासीय स्थिति तथा शिक्षा के बीच एक अभूतपूर्व संबंध है।

तालिका–4 शैक्षिक स्तर व आवासीय स्थिति के बीच एक घनिष्ठ सम्बन्ध प्रदर्शित करती है। 28 निरक्षरों में 64 प्रतिशत अविकसित क्षेत्रों से सम्बन्ध रखते हैं, उससे कम अर्धविकसित तथा सबसे कम निरक्षर व्यक्ति विकसित क्षेत्रों में निवास करते हैं।

यदि हम आवासीय क्षेत्र व परिवार के मुखियाओं के शैक्षिक स्तर की तुलना करें तो हम पाते हैं कि 60 से अधिक लोग जो अविकसित व अर्धविकसित क्षेत्रों में निवास करते हैं, वे आठवीं कक्षा या उससे भी कम पढ़े लिखे हैं तथा विकसित क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों ने हाई स्कूल के ऊपर तथा अन्य प्रकार की शिक्षा प्राप्त की है।

मुखियाओं की पत्नियों में मानव संसाधन विकास

206 परिवारों के मुखियाओं में कुल 193 की पत्नियां जीवित हैं जिनमें से 34 प्रतिशत (तालिका 6) निरक्षर हैं जबकि शेष हाईस्कूल स्तर से कम पढ़ी हैं। अधिकांश महिलाओं ने सरकारी या नगर निगम द्वारा संचालित हिन्दी माध्यम स्कूलों में शिक्षा प्राप्त की है।

तालिका–5

परिवार के मुखियाओं की पत्नियों का शैक्षिक स्तर

शिक्षा का स्तर	व्यक्तियों की संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	66	34 प्रतिशत
1 से 5	78	40 प्रतिशत
6 से 8	38	20 प्रतिशत
9 से 12	11	6 प्रतिशत
योग	193	100 प्रतिशत

महिला या पुरुषों में से किसी को भी किसी विकास समिति या अन्य संस्था द्वारा शिक्षा के महत्व संबंधी जानकारी या परामर्श आदि नहीं मिला है।

परिवार के सदस्यों में मानव संसाधन विकास

परिवार के मुखिया और उनकी पत्नियों के अतिरिक्त परिवार के अन्य सदस्यों को दो समूहों में बांटा गया है।

1. निरक्षर परन्तु शिशु नहीं हैं।
2. स्कूल जाने वाले बच्चे।

शिशुओं को विश्लेषण में शामिल नहीं किया गया है चूंकि वे प्रस्तुत अध्ययन की परिधि में नहीं आते हैं। निरक्षर व्यक्तियों की संख्या 131 है जिनमें 30 (23 प्रतिशत) पुरुष तथा 101 (77 प्रतिशत) स्त्रियां हैं। एक व्यक्ति को छोड़कर ये सभी विवाहित हैं जबकि 6 व्यक्ति विधुर या विधवाएं हैं। ये सभी व्यक्ति सामान्यतया सफाई आदि तथा मजदूरी कार्यों को करने के लिए उपलब्ध हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा के प्रति सफाई कामगारों का दृष्टिकोण सकारात्मक है। अधिकांश सफाई कामगार अपने बच्चों को प्रारम्भिक स्तर पर पढ़ाना पसन्द करते हैं। स्कूल जाने वालों में लड़कों की संख्या लड़कियों से काफी अधिक है।

तालिका–6

लैगिंक आधार पर स्कूल जाने वाले बच्चों का विवरण

लिंग	व्यक्तियों की संख्या	प्रतिशत
बालक	280	60
बालिकाएं	187	40
योग	467	100

शैक्षिक स्तर में नर्सरी से लेकर उच्च स्तर तक की शिक्षा शामिल है। माता–पिता की तुलना में बच्चे शैक्षिक क्षेत्र में अधिक प्रगति कर रहे हैं क्योंकि कुछ बच्चे उच्च स्तर की शिक्षा भी प्राप्त कर रहे हैं। हालांकि यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि वे अपने उच्च स्तरीय अध्ययन को पूरा करेंगे क्योंकि अधिकांश व्यक्ति अपनी शिक्षा अधूरी छोड़ देते हैं।

लगभग 50 प्रतिशत बच्चे प्राइमरी स्कूल स्तर की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और जैसे–जैसे हम उच्च स्तरीय शिक्षा की ओर जाते हैं व्यक्तियों की प्रतिशत मात्रा घटती जाती है अर्थात उच्च स्तर पर अध्ययन करने वाले व्यक्ति प्राइमरी स्तर की तुलना में बहुत कम हैं। आठवीं कक्षा तक पहुंचते–पहुंचते बालक और बालिकाओं दोनों की संख्या में आश्चर्यजनक रूप से गिरावट दर्ज की गई है। यह कोई सकारात्मक संकेत नहीं है। यदि यही प्रवृत्ति जारी रहती है तो इन बच्चों का शैक्षिक स्तर अपने माता–पिता के शैक्षिक स्तर से भी कम रहेगा।

जहां तक शिक्षा के माध्यम का प्रश्न है तो माता–पिता तथा बच्चों दोनों के समय यह लगभग एक जैसा रहा है चूंकि उनमें से अधिकांश (95 प्रतिशत) हिन्दी माध्यम स्कूलों में अध्ययन करते हैं, जिनमें से 88 प्रतिशत प्राईवेट संस्थाओं द्वारा संचालित हो रहे हैं। लगभग 63 अर्थात 18 प्रतिशत बच्चे सरकार द्वारा संचालित स्कूलों में पढ़ते हैं। माता–पिता के समय की तुलना में अब सरकारी स्कूलों की बजाय बच्चे प्राइवेट स्कूलों में जाने लगे हैं। ऐसा वे अपनी सुविधा के लिए करते हैं, शिक्षा की गुणवत्ता या स्तर का इससे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। कोई बच्चा पब्लिक स्कूल में पढ़ता हो ऐसी जानकारी नहीं मिली। उनकी शिक्षा केवल सामाजिक विज्ञान के विषयों तक ही सीमित है।

इसीलिए सफाई कामगारों में निम्नस्तरीय मानव संसाधन विकास के कारण सृजनात्मकता तथा रचनाशीलता का अभाव पाया जाता है। फलस्वरूप वे किसी अन्य रोजगार या नौकरी आदि प्राप्त करने के लिए कोई सार्थक प्रयत्न

तालिका–7
सफाई कामगारों में स्कूल छोड़ने की दर

लिंग	स्कूल छोड़ते समय शैक्षिक स्तर					
	1–5	6–8	9 से 12	स्नातक +	अन्य	योग
बालक	25 (28%)	26 (30%)	32 (36%)	4 (5%)	1 (1%)	88 (100%)
बालिकाएं	10 (30%)	12 (35%)	11 (32%)	1 (3%)	0 (0%)	34 (100%)
योग	35 (29%)	38 (31%)	43 (35%)	5 (4%)	1 (1%)	122 (100%)

नहीं कर पाते हैं।

हालांकि हमने अभी तक स्कूल जाने वाले तथा निरक्षर सदस्यों के संबंध में मानव संसाधन विकास का अध्ययन किया है। परन्तु सफाई कामगारों का एक समूह ऐसा भी है जो शिक्षा बीच में ही अधूरी छोड़ देता है, उसका अध्ययन करना भी आवश्यक है। जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि आठवीं कक्षा तक पहुंचते–पहुंचते स्कूल जाने वालों की संख्या कम होती जाती है।

तालिका–7 से पता चलता है कि प्राइमरी स्तर से लेकर कालेज स्तर तक शिक्षा अधूरी छोड़ने वालों की दर बढ़ती जाती है। शिक्षा अधूरी छोड़ने के मामले में बालक और बालिकाओं की स्थिति में कोई विशेष अन्तर नहीं है। दोनों में शिक्षा अधूरी छोड़ने की दर प्राइमरी से कालेज स्तर तक लगभग समान अर्थात 29 से 35 प्रतिशत है।

अधिकांश बालक 16 से 25 वर्ष की उम्र में स्कूल जाना बन्द करते हैं जबकि 16–20 साल की उम्र, विशेषकर लड़कियों के लिए काफी संवेदनशील होती है और इस उम्र में आधे से अधिक, लगभग 56 प्रतिशत लड़कियां स्कूल जाना बन्द कर देती हैं।

यह इस कारण भी हो सकता है कि कम उम्र में लड़कियों की शादी कर दी जाती है या शादी के बाद पढ़ना बंद कर या करा दिया जाता है। पुरुष वर्ग के व्यक्ति 21 से 25 वर्ष की आयु में स्कूल जाना बन्द करते हैं जो संभवतया शादी के लिए आदर्श उम्र है। इसका अर्थ यह है कि सफाई कामगारों में शिक्षा को शादी आदि की अपेक्षा दोयम दर्जे की आवश्यकता समझा जाता है अर्थात शादी को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि सूचना, ज्ञान और मनोरंजन के साधन जैसे टी.वी., रेडियो, फिल्म, पत्र–पत्रिकाएं आदि उपलब्ध न होने पर भी सफाई कामगार सबसे ज्यादा समय मनोरंजन के कार्यक्रमों एवं अन्य साधनों पर व्यय करते हैं। तकनीकी शिक्षा, सामान्य शिक्षा तथा सम्मान सहित कमाने के उपायों को खोजने के लिए उन्हे कोई परामर्श देने वाला नहीं है। इसका परिणाम यह हुआ कि उनका विकास, ज्ञान और कौशल अपरिवर्तित या स्थिर रहा है। जीवन के प्रति कोई सकारात्मक सोच न होने के कारण उनमें प्रतियोगितात्मक प्रवृत्ति और संकल्प का अभाव है।

सामाजिक उत्सवों तथा मद्यपान पर अपनी आमदनी का एक बड़ा भाग खर्च किया जाता है जिसके कारण उनकी जीवन शैली प्रभावित होती है। वर्तमान शिक्षा से उन्हें ऐसी आशा भी नहीं होती कि वे इस शिक्षा के आधार पर कोई अन्य कार्य (सफाई के अतिरिक्त) प्राप्त कर सकेंगे। इसलिए उनकी, अन्य कार्यों की तुलना में शीघ्र उपलब्ध होने वाले सफाई कार्य के प्रति रुचि ज्यों की त्यों बनी रहती है। वे स्वाभाविक रूप से शिक्षा के प्रति लगभग उदासीन हैं। अतः शिक्षा सम्बन्धी कार्यों पर ज्यादा पैसा नहीं लगाते हैं, बल्कि औपचारिकतावश शिक्षा प्राप्त करते हैं। राज्य सरकार तथा नगर निगम सहित किसी भी विकास संस्था ने सफाई कामगारों के विकास, विशेष तौर पर आर्थिक और गैर आर्थिक साधनों के द्वारा, प्रयत्न नहीं किया है जिससे कि वे मानव संसाधन विकास में सक्रिय भाग ले सकें। यही कारण है कि अच्छी साक्षरता दर, शिक्षा तथा साधन होते हुए भी उनका विकास तीव्र गति से नहीं हो पा रहा है। व्यावसायिक संगठनों की सहायता से सफाई कामगारों को अपने निवास स्थान, आय, परिवार का आकार आदि का ध्यान रखकर अपने विकास पर भी विचार करना चाहिए। ❑

पाठकों से

इस पत्रिका में *पाठकों के विचार* स्तंभ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार दो सौ शब्दों से अधिक के न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय कृषि भवन, नई दिल्ली–110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परंतु उन पाठकों को पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तंभ में प्रकाशित होंगे।

— **सम्पादक**

चाय : क्या कहते हैं आधुनिक शोध?

डा. विजय कुमार उपाध्याय,*

आज संसार का शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो चाय से परिचित न हो। यह एक सर्वाधिक लोकप्रिय तथा सर्वसुलभ पेय है जिसका सेवन अमीर से गरीब तक, तथा नीरोग व्यक्ति से लेकर रोगी तक सभी करते हैं। आजकल किसी भी अतिथि के स्वागत हेतु यह एक सबसे सरल साधन है। भारत तथा संसार के अन्य देशों में इसका प्रचार–प्रसार बढ़ता ही जा रहा है। ब्रिटेन में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला है कि वहां प्रतिदिन लगभग साढ़े अठारह करोड़ कप चाय की खपत होती है। इस आंकड़े को यदि उस देश की जनसंख्या के दृष्टिकोण से देखा जाए तो कहा जा सकता है कि औसत रूप से वहां प्रतिदिन प्रति व्यक्ति द्वारा लगभग तीन कप चाय का सेवन किया जाता है।

उपलब्ध साक्ष्यों से पता चलता है कि चाय का प्रचार चीन से शुरू हुआ। चीन में इसका उपयोग शुरू किये जाने के कुछ विशेष कारण थे। वहां पुराने जमाने में पानी प्रायः शुद्ध अवस्था में नहीं मिलता था। अतः वे पानी को उबाल कर पीते थे जिससे उनका विकार दूर हो जाता था। पानी पूरी तरह उबल चुका है या नहीं इसकी जांच हेतु चाय की पत्ती का उपयोग किया जाता था। उबलते पानी में चाय की पत्ती डालने पर यदि पानी का रंग सुनहला हो जाता था तो मान लिया जाता था कि वह पूरी तरह उबल चुका है। धीरे–धीरे चाय एक पेय के रूप में प्रचलित हो गई। चीन से चाय का प्रचार यूरोपीय देशों में हुआ। भारत में चाय का प्रचार अंग्रेजों द्वारा किया गया।

चाय पीने से हमें तात्कालिक गर्मी तथा ताजगी तो प्राप्त होती ही है, साथ ही साथ इसके सेवन से हमारे स्वास्थ्य पर भी अनेक प्रकार के लाभदायक प्रभाव पड़ते हैं। कुछ ही समय पूर्व स्काटलैंड में डण्डी स्थित नाइनवेएस हास्पिटल में कार्यरत हफ टनस्टाल पीडो नामक एक चिकित्सा वैज्ञानिक ने अपने शोधों से प्राप्त जानकारी के आधार पर बताया है कि चाय में 'पोलीफेनाल' नामक एक पोषक तत्व पाया जाता है जो एक शक्तिशाली ऐंटीआक्सिडैंट है और जिसके नियमित सेवन से हृदय रोग तथा कैंसर से ग्रस्त होने का खतरा कम रहता है। वस्तुतः चाय में उपस्थित 'पोलीफेनाल' के ऐंटीआक्सिडैंट गुण विटामिन सी के ऐंटीआक्सिडैंट आक्सिडैंट गुणों की तुलना में 20 गुणा अधिक प्रभावी हैं। राइस इवान्स नामक एक ब्रिटिश चिकित्सा वैज्ञानिक ने अपने शोधों के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि चाय के नियमित सेवन से धमनी संबंधी हृदय रोग (फोरोनरी हार्ट डिजीज) होने की संभावना कम रहती है। हाल ही में संयुक्त राज्य अमरीका की कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी में कार्यरत कुछ शोधकर्ताओं ने पता लगाया है कि चाय में फ्लोराइड नामक खनिज काफी परिणाम में मौजूद रहता है। यह खनिज हमारे दांतों के क्षय को रोक कर उन्हें मजबूती प्रदान करता है।

अमेरिकन जर्नल आफ एपिडिमियोलौजी (अंक 149 पृष्ठ 162) में एक शोध पत्र प्रकाशित हुआ है जिनमें 680 लोगों पर काली चाय पीने से पड़ने वाले प्रभाव की चर्चा की गई है। इस अध्ययन से पता चला है कि जो लोग काली चाय पीते थे उनको ऐसे लोगों की तुलना में दिल के दौरे पड़ने की संभावना 44 प्रतिशत कम थी जो चाय नहीं पीते थे। यह अध्ययन माइकल ग्राजियानो और उनके साथियों ने बोस्टन स्थित ब्राइहम ऐंड वीमन हास्पिटल में किया। वस्तुतः चाय में फ्लैवोनाल समूह के रसायन पाये जाते हैं। ये सभी रसायन शरीर के ऊतकों को हानि पहुंचाने वाले आक्सिकारक पदार्थों का सफाया करते हैं। नोटविच स्थित इंस्टीटयूट आफ फूड रिसर्च से जुड़े वैज्ञानिक गैरी विलियम्सन ज्आफ प्लम और कीथ प्राइस ने असम और दार्जीलिंग समेत छह स्थानों की चाय का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला है कि फ्लैवोनाल समूह के रसायनों के लिए चाय एक उत्तम स्रोत है। 'रिडौक्स रिपोर्ट' (अंक 4, पृष्ट 13,) में प्रकाशित इन वैज्ञानिकों के शोध पत्र के अनुसार चाय में मौजूद फ्लैवोनाल समूह के नौ रसायन चाय के पौधों को किसी प्रकार की क्षति या संक्रमण से बचाने वाले पदार्थ 'क्वर्सिटीन' अथवा 'कैंपफेराल' से संबंधित हैं।

चाय के अत्यधिक सेवन से हमारे स्वास्थ्य को पहुंचने वाले नुकसानों की सूची भी काफी लम्बी है। चाय में कई प्रकार के हानिकारक तत्व पाए जाते हैं जिनमें सर्वप्रमुख है लेड। हाल में हैदराबाद उपभोक्ता शोध संस्थान द्वारा किए गए शोधों से पता चला है कि भारत में पाई जाने वाली चाय के अनेक ब्रांडों में कोई भी ऐसा नहीं है जो लेड रहित हो। वस्तुतः चाय में उपस्थित लेड की अधिकांश मात्रा इसके प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग) के दौरान इसमें शामिल हो जाती है। वैसे तो सामान्य तौर पर प्रसंस्करण के दौरान चाय में लेड की मिलाई जाने वाली मात्रा खाद्य सुरक्षा कानून द्वारा निर्धारित सीमा के अन्दर होती है, परन्तु हाल के शोधों से पता चला है कि यह सीमा भी सुरक्षित नहीं है। शोधों से ज्ञात हुआ है कि भारत में पाई जाने वाली चाय की विभिन्न किस्मों में 10 भाग प्रति करोड़ से लेकर 95 भाग प्रति करोड़ तक लेड मौजूद रहता है। सामान्य तौर पर चाय में लेड की सुरक्षित मात्रा 50 भाग प्रति करोड़ तक मानी जाती है। चिकित्सा वैज्ञानिकों द्वारा किए गए शोधों से पता चला है कि चाय में निर्धारित सीमा से

* प्राध्यापक–भगर्भ, इंजिनियरी कॉलेज, भागलपुर – 813210

अधिक मात्रा में लेड की उपस्थिति गुर्दा, यकृत, श्वास नलिका, स्नायु तंत्र, हृदय, रक्त वाहिनियों तथा आंतों को काफी नुकसान पहुंचाती है। चाय में लेड की अधिक उपस्थिति शरीर की अस्थियों को भी नुकसान पहुंचाती है। गर्भवती महिलाओं द्वारा ऐसी चाय के सेवन से गर्भस्थ शिशु के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

चाय में लेड के अतिरिक्त डी.डी.टी., टैनिग, कैफीन तथा अन्य हानिकारक तत्व भी पाये जाते हैं। डी.डी.टी. चाय का मूल घटक नहीं है। हानिकारक कीड़ों से बचाने हेतु चाय के पौधों पर डी.डी.टी. का छिड़काव किया जाता है। यही डी.डी.टी. चाय की पत्तियों द्वारा अवशोषित होकर चाय में शामिल हो जाता है। फिर यह डी.डी.टी. गर्म चाय के साथ हमारे शरीर में पहुंच जाता है। यह हमारे पाचन तंत्र को बुरी तरह प्रभावित करता है।

टेनिन तथा कैफीन चाय के मूल घटक हैं। टैनिन एक ऐसा पदार्थ है जो चमड़े को पकाने हेतु काम में लाया जाता है। ठीक इसी प्रकार का काम टैनिन–वाली चाय हमारे आमाशय में जाकर करती है। आमाशय की दीवार पर टैनिन की परत चढ़ने से उसकी पाचन शक्ति कम हो जाती है। इसके कारण कई प्रकार के रोग पैदा होते हैं। इंग्लैंड में चिकित्सा वैज्ञानिकों द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चला है उस देश में असंख्य लोग सिर्फ कड़ी चाय पीने के कारण रोग के शिकार बनते हैं। कैफीन भी हमारे शरीर के लिए हानिकारक है। स्टीफेन चर्निस्को नामक एक अमरीकी चिकित्सा वैज्ञानिक ने अपनी पुस्तक "पुस्तक ब्लूज" में बताया है कि हमारे रक्त में कैफीन का स्तर बढ़ जाने से स्वास्थ्य संबंधी कई प्रकार की समस्याएं पैदा होती हैं। इन समस्याओं में प्रमुख हैं– चिड़चिड़ापन, थकावट और मिचली इत्यादि। अतः हम कह सकते हैं कि चाय के जहां कई लाभ हैं वहां इससे हानियां भी कम नहीं हैं। वास्तव में अधिक चाय पीना तो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है ही, इसमें कोई दो राय नहीं। ❑

(पृष्ठ 40 का शेष) **सामाजिक न्याय और भूमि.....**

बाड़े लगाने और मेड़ें छोड़ने में भी अतिरिक्त व्यय होता है। बहुत–सी भूमि मेड़ आदि के रूप में बेकार चली जाती है। अनुमान है कि कृषि योग्य भूमि का तीन प्रतिशत भाग मेड़ों से घिरा है।

उपविभाजन और अपखंडन से समय और शक्ति का व्यर्थ में अपव्यय होता है। यही नहीं जोत छोटे–छोटे टुकड़ों में विभाजित होने से किसानों के बीच में रास्ता तथा चोहद्दी के लिए आए दिन झगड़े हुआ करते हैं।

यदि खेत दूर–दूर तक बिखरे हैं तो फिर उन पर निगरानी रखना कठिन होता है और एक खेत से दूसरे खेत में खाद, बीज और औजार लाने ले जाने में अनावश्यक व्यय भी होता है। छोटे खेतों पर सघन खेती करने में भी कठिनाई होती है। इन छोटे आकार के खेतों की जमानत पर ऋण भी सरलता से नहीं मिलता। अतः उपविभाजन और अपखंडन गम्भीर खतरे उत्पन्न करते हैं।

जोत का आकार छोटा होने से वर्ष भर रोजगार नहीं मिलता। उसे या तो शहर जाकर रोजगार की तलाश करनी पड़ती है अथवा ऋण लेकर काम चलाना पड़ता है। इससे उसका जीवन–स्तर भी ऊंचा नहीं उठ पाता और फिर छोटी जोतें हरित क्रांति में भी बाधक हैं।

यदि कृषि का विकास करना है तो उपविभाजन व अपखंडन की समस्या हल करनी होगी और उसका एकमात्र हल चकबंदी है।

चकबंदी से आशय एक कृषक के बिखरे हुए खेतों को एक चक के रूप में कर देना है अर्थात चकबंदी एक परिवार के बिखरे हुए खेतों को एक स्थान पर करने की प्रक्रिया है। चकबंदी में किसान की संपूर्ण जोत एक स्थान पर कर दी जाती है जिसके द्वारा किसान को कई बिखरे हुए टुकड़ों के स्थान पर एक ही जगह में सारी भूमि प्राप्त हो जाती है।

चकबंदी भी दो प्रकार की होती है। ऐच्छिक तथा अनिवार्य चकबन्दी। ऐच्छिक चकबंदी भारत में सर्वप्रथम पंजाब में 1992 में आरंभ हुई। इसमें चकबंदी कराना किसान की स्वेच्छा पर निर्भर रहता है। मध्य प्रदेश, गुजरात, पश्चिम बंगाल आदि में ऐच्छिक चकबंदी की जाती है। कई किसान चकबंदी के लाभों को नहीं समझ पाते अथवा इसके उन्हें अपने पैतृक भू–संपत्ति के प्रति मोह भी रहता है। परिणामस्वरूप वह उसे बदलना नहीं चाहता, लेकिन उन्हें शिक्षा का प्रसार और उचित मार्गदर्शन द्वारा स्वैच्छिक चकबंदी के लिए तैयार किया जा सकता है।

अनिवार्य चकबंदी में किसान को अनिवार्य रूप से चकबंदी करानी पड़ती है। भारत में अनेक राज्यों में अनिवार्य चकबंदी है। पंजाब और हरियाणा में तो चकबंदी का काम पूरा हो चुका है। सभी राज्यों में चकबंदी को प्रोत्साहन देना चाहिए ताकि भारतीय कृषि जीविकोपार्जन का एक साध्य मात्र न रहकर एक लाभप्रद व्यवसाय बन सके।

भूमि अभिलेखों का आधुनिकीकरण केवल भूमि सम्बन्धी सुधारों को लागू करने के लिए ही आवश्यक नहीं बल्कि कृषि ऋण के लिए भी आवश्यक है जिसका मिलना भूमि सम्बन्धी हक पर निर्भर होता है। भूमि अभिलेखों की स्थिति हर राज्य में अलग–अलग है। कुछ राज्यों में तो ये अभिलेख काफी संख्या में अद्यतन हैं पर अन्य में जहां जमीदारी प्रथा काफी पुरानी थी, अभिलेखों में की हुई प्रविष्टियों का वास्तविकता से कम ही सम्बन्ध है। अतः सारे देश में भूमि व्यवस्था को व्यवस्थित करने हेतु भूमि अभिलेखों के संकलन और संशोधन का काम शुरू किया गया है ताकि स्वामित्व, आसामियों, बटाईदारों और अन्य धारकों के अधिकारों के बारे में नवीनतम स्थिति स्पष्ट हो जाए। इस प्रकार हमारे देश में भूमि सुधार अभियान सक्रिय रहा है, लेकिन अभी भी बहुत कुछ करना शेष है। ❑

देश में गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले लोगों का प्रतिशत घटा

देश में गरीबी की रेखा से नीचे बसर करने वाले लोगों का प्रतिशत घटकर अब 26.1 रह गया है। 1992–93 में 36 प्रतिशत से यह 10 प्रतिशत कम हो गया है। इनमें ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले गरीबों का प्रतिशत 27.09 है जबकि शहरी क्षेत्र में 23.62 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बिताते हैं। यह आंकड़े 22 फरवरी 2001 को योजना आयोग ने राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आधार पर जारी किए और चयनित परिवारों के 30 दिन के प्रति व्यक्ति खपत व्यय पर आधारित हैं।

राज्यों में उड़ीसा में गरीबों का प्रतिशत सबसे ज्यादा है। वहां 47.15 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करते हैं। दूसरा स्थान बिहार का है जहां गरीबों का प्रतिशत 42.6 है। तीसरा स्थान मध्य प्रदेश (37.43 प्रतिशत) और चौथा स्थान सिक्किम (36.55 प्रतिशत) का है।

	ग्रामीण		शहरी		कुल	
क्र. सं. राज्य / केन्द्र शासित	व्यक्ति (लाखों में)	प्रतिशत	व्यक्ति (लाखों में)	प्रतिशत	व्यक्ति (लाखों में)	प्रतिशत
1. आंध्र प्रदेश	58.13	11.05	60.88	26.63	119.01	15.77
2. अरुणाचल प्रदेश	3.80	40.04	0.18	7.47	3.98	33.47
3. असम	92.17	40.04	2.38	7.47	94.55	36.09
4. बिहार	376.51	44.30	49.13	32.91	425.64	42.60
5. गोवा	0.11	1.35	0.59	7.52	0.70	4.40
6. गुजरात	39.80	13.17	28.09	15.59	67.89	14.07
7. हरियाणा	11.94	8.27	5.39	9.99	17.34	8.74
8. हिमाचल प्रदेश	4.84	7.94	0.29	4.63	5.12	7.63
9. जम्मू कश्मीर	2.97	3.97	0.49	1.98	3.46	3.48
10. कर्नाटक	59.91	17.38	44.49	25.25	104.40	20.04
11. केरल	20.97	9.38	20.07	20.27	41.04	12.72
12. मध्य प्रदेश	217.32	37.06	81.22	38.44	298.54	37.43
13. महाराष्ट्र	125.12	23.72	102.87	26.81	227.99	25.02
14. मणिपुर	6.53	40.04	0.66	7.47	7.19	28.54
15. मेघालय	7.89	40.04	0.34	7.47	8.23	33.87
16. मिजोरम	1.40	40.04	0.45	7.47	1.85	19.47
17. नगालैंड	5.21	40.04	0.28	7.47	5.49	32.67
18. उड़ीसा	143.69	48.01	25.40	42.83	169.09	47.15
19. पंजाब	10.20	6.35	4.29	5.75	14.49	6.16
20. राजस्थान	55.06	13.74	26.78	19.85	81.83	15.28
21. सिक्किम	2.00	40.04	0.04	7.47	2.05	36.55
22. तमिलनाडु	80.51	20.55	49.97	22.11	130.48	21.12
23. त्रिपुरा	12.53	40.04	0.49	7.47	13.02	34.44
24. उत्तर प्रदेश	412.01	31.22	117.88	30.89	529.89	31.15
25. पश्चिम बंगाल	180.11	31.85	33.38	14.86	213.49	27.02
26. अंडमान निकोबार द्वीप समूह	0.58	20.55	0.24	22.11	0.82	20.99
27. चण्डीगढ़	0.06	5.75	0.45	5.75	0.51	5.75
28. दादरा व नगर हवेली	0.30	17.57	0.03	13.52	0.33	17.14
29. दमन व दियु	0.01	1.35	0.05	7.52	0.06	4.44
30. दिल्ली	0.07	0.40	11.42	9.42	11.49	8.23
31. लक्षद्वीप	0.03	9.38	0.08	20.27	0.11	15.60
32. पांडिचेरी	0.64	20.55	1.77	22.11	2.41	21.67
भारत	1932.43	27.09	670.07	23.62	2602.50	26.10

गरीबों की जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का स्थान प्रथम है जहां 5 करोड़ 30 लोग गरीब हैं। दूसरा स्थान बिहार का है जहां चार करोड़ 25 लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन व्यतीत करते हैं। इसके बाद तीसरा स्थान मध्य प्रदेश (3 करोड़) और चौथा महाराष्ट्र (2.27 करोड़) है।

ग्रामीण गरीबों की संख्या भी सबसे ज्यादा उत्तर प्रदेश (4.12 करोड़) में हैं। बिहार का यहां भी दूसरा स्थान (3.76 करोड़) है। मध्य प्रदेश का तीसरा और पश्चिम बंगाल का चौथा स्थान है।

साभार : पत्र सूचना कार्यालय

आर एन. /708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या :डी (डी एल) 12057/2001
आई.एस.एन.एन. 0971–8451
पूर्व भुगतान के बिना के अधीन डी.पी.एस.ओ. दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)–55

R.N./708/57
P&T Regd. No. D (DL) 12057/2001
ISSN 0971-845
Licenced under U (DN)-55
to Post without pre-payment of DPSO, Delhi-54

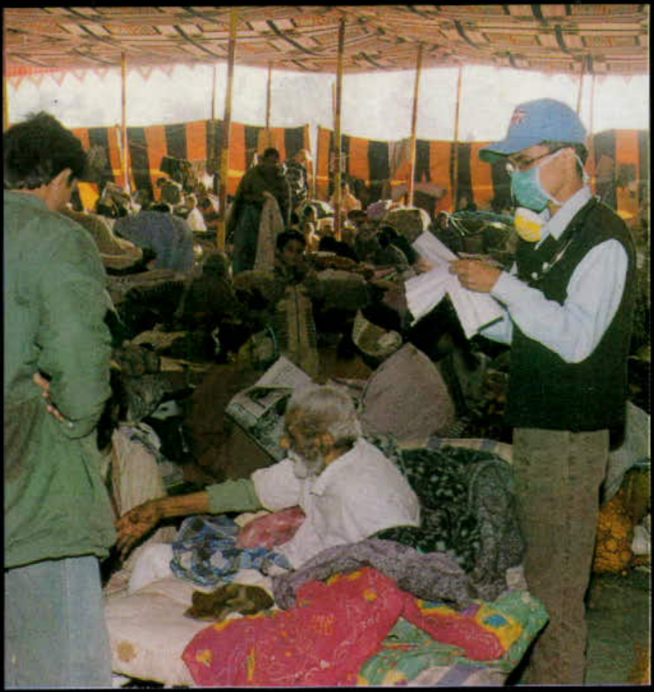

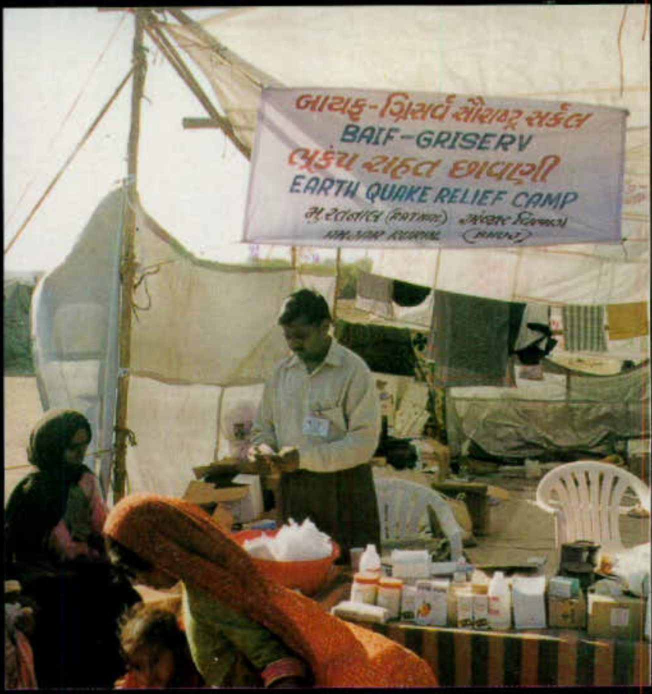

श्रीमती सुरिन्द्र कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली –110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू –30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–*II*, नई दिल्ली–20 संपादकः बलदेव सिंह मदान